२/२२ १५-५-७०

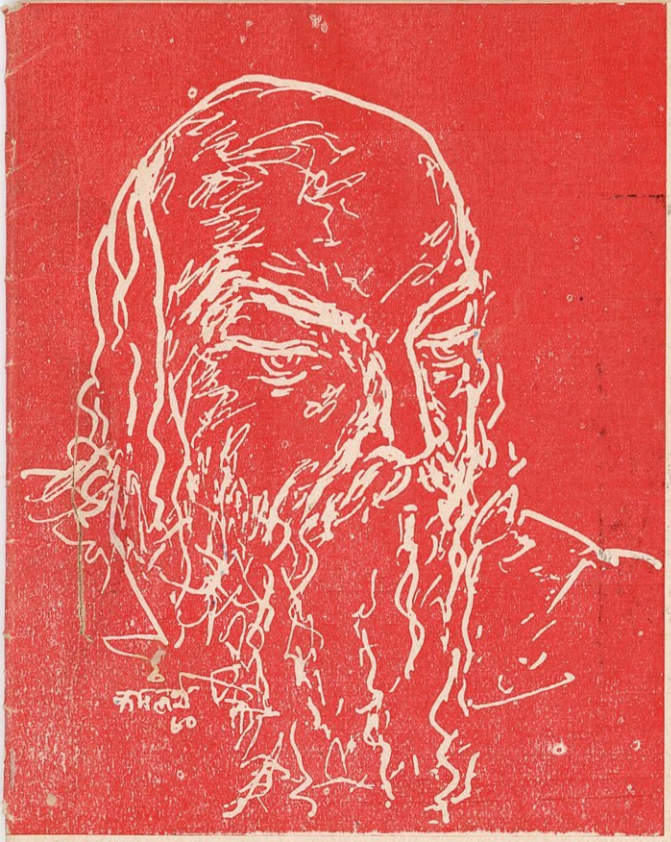

युक्रांद

मनुष्य के जीवन में इतना दुख क्यों है?
क्योंकि, उसके जीवन में स्वरों की तो भीड़ है,
लेकिन, स्वरशून्य संगीत बिलकुल नहीं है।
क्योंकि, उसके जीवन में विचारों का शोरगुल तो बहुत है,
लेकिन, निर्विचार का मौन बिलकुल नहीं है।
क्योंकि उसके जीवन में भावनाओं का क्षोभ तो बहुत है,
लेकिन, निर्भाव की सरलता बिलकुल नहीं है।
क्योंकि, उसके जीवन में दिशाओं की दौड़ तो बहुत है,
लेकिन, अदिशा में ठहराव बिलकुल नहीं है।
और अंततः, क्योंकि, उसके जीवन में वह स्वयं तो अतिशय है,
लेकिन, परमात्मा बिलकुल नहीं है।

रजनीश के प्रणाम

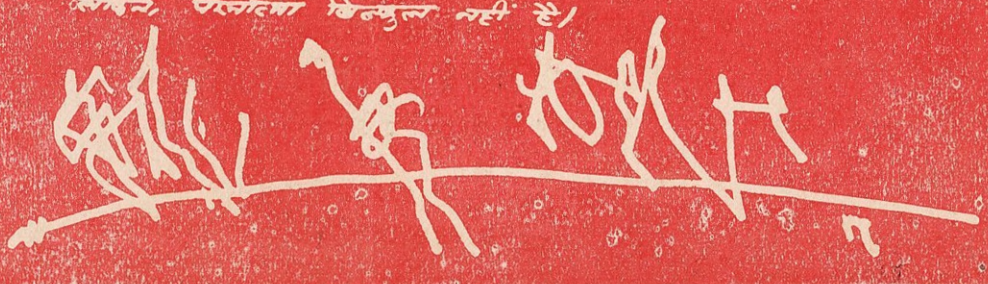

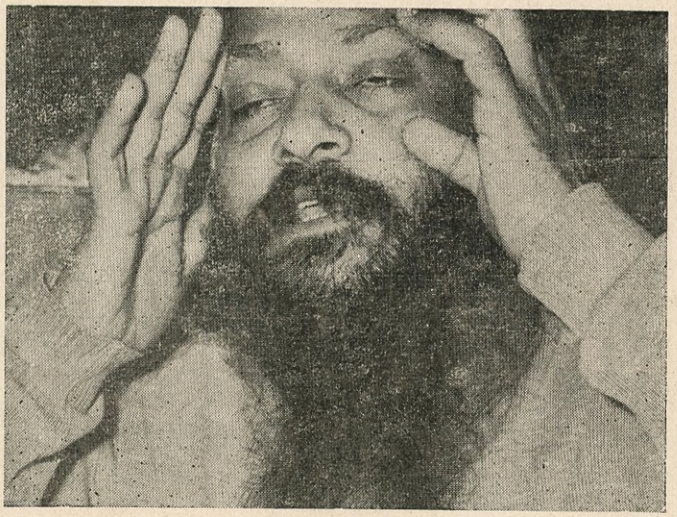

सत्य, तैरने से नहीं

डूबने से मिलता है

तैरना

सतह पर है

डूबना

उन गहराइयों में ले जाता है

जिनका कि

कोई अंत नहीं है।

दिनांक	स्थान	कार्यक्रम	संयोजक
१९ एवं २० मई ७०	नवसारी (सूरत)	सत्संग	श्री कांतिलाल पटैल, भाग्योदय कांस्ट्रक्शन कं०, दूधिया तालाब रोड, नवसारी (सूरत)
२१, २२ एवं २३ मई ७०	सूरत	प्रवचन	श्रीनानुभाई नायक, साहित्य संगम, बाबा सीढ़ी, गोपी पुरा, सूरत–२
२४ मई ७०	बंबई	——	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, बंबई : १
२, ३, ४ एवं ५ जून ७०	अमृतसर	प्रवचन	श्री चमनलाल अग्रवाल, २५, केनेडी, एवेन्यु अमृतसर

मुखपृष्ठ रेखा अनुकृति : श्री कमलेश शर्मा, रायपुर।
अंतिम पृष्ठ चित्र : श्री दीनू रावल, राजकोट।
आवरण ले आउट : श्री हरीशचंद, देहली

अंतस के तीन फूल

(आचार्य श्री की पत्र प्रेरणा से)

अंधेरा है, आंधियां हैं, अंधापन है ।
मनुष्य जैसे इन सबका ही जोड़ है ।
लेकिन, आशा भी है परिवर्तन की— आमूल रुपान्तर की ।
और आशा अंधेरे से भी बड़ी है, आंधियों से भी शक्तिशाली है, अंधेपन से भी गहरी है ।
मनुष्य की जड़ें तो अंधेरे में ही होती हैं ।
लेकिन जड़े अंत नहीं, आरम्भ ही हैं ।
अंत तो सदा फूलों पर ही होता है ।
वृक्षों में ही नहीं, मनुष्यों में भी तो फूल लगते हैं ।
फूलों की तलाश ही धर्म है ।
दृश्य में अदृश्य की तलाश—वास्तविक में संभावना की तलाश ही धर्म है ।
खोजो तो सीमा में असीम मिलता है ।
खोजो तो रुप में अरुप मिलता है ।
खोजो तो पदार्थ में परमात्मा मिलता है ।
सीमित या साकार कहीं है नहीं ।
वह तो बस न खोजने वाले चित्त की भांति है ।

●

फूल हैं और भी..... जो वृक्षों पर नहीं खिलते हैं ।
वरन् खिलते हैं प्राणों में ।
सुगंधें हैं और भी—जो फूलों से नहीं बहती हैं ।
वरन् बहती हैं प्राणों से ।
अज्ञात हैं उनकी जड़ें, अज्ञात हैं उनके उद्‌गम स्रोत, अज्ञात हैं उनके आवागमन के पथ ।
पर जो मौन में,शून्य में —स्वयं में खोजते हैं, उनके लिए सब ज्ञात हो जाता है ।
प्रशांत में वैसी गहराई नहीं है ।
और न ही गौरीशंकर की वैसी ऊंचाई है ।
जैसी स्वयं में डूबने में है ।
गहराई भी और ऊंचाई भी ।
और एक ही साथ ।
लेकिन मेरी मत मानना ।

मैं हूं ही कौन ?
और किसी की भी मत मानना ।
क्योंकि जो मानकर जीता है, वह तट पर ही रह जाता है ।
तट पर नहीं—जो है, वह डूबने में है ।
डूबो और जानो ।
ऐसा न हो कि कभी कहना पड़े :
"जिन खोजा तिन पाइयाँ,
गहरे पानी पैठ ;
मैं बोरी डूबन डरी,
रही किनारे बैठ ।"
नहीं,— लेकिन, ऐसा मौका नहीं ही आयेगा ।
क्योंकि, मैंने तुम्हें धक्का दे देने का तय ही कर लिया है !

●●

जीवन एक रहस्य है·····और छोर हीन ।
इसलिए, क्या, क्यों, कैसे मत पूछो ।
उस सब पूछताछ से जीवन को समझने में कोई सहायता नहीं मिलती ।
हाँ-बाधा जरूर पड़ती है ।
इसलिए, जो है उसे निश्प्रश्न जियो ।
जीवन है रहस्य ।
और प्रश्नों से बन जाता है वह पहेली ।
रहस्य में रस है, आनंद है, अनुभूति है ।
और पहेली में है केवल बौद्धिक बोझ ।
रस को बोझ मत बनाओ ।
उसमें डूबो और एकरस बनो ।
एकरस बनने में हजार कठिनाइयाँ हैं ।
लेकिन, उन्हें पार करो ।
पार करने से रस और गहराता है ।
घबड़ाओ मत और भागो मत ।
कठिनाइयों की पर्वतीय चोटियों के पीछे ही प्रियतम का आवास है ।

●●●

सौन्दर्य, सत्य और प्रार्थना के फूल

[एक्सटेंशन लायब्रेरी लुधियाना में दिया गया २१ मार्च ७० का एक प्रवचन]

संकलन : श्री सरदारीलाल सहगल, अमृतसर

जैसे कोई बड़ा बगीचा हो, लेकिन फूल एक भी न खिले ऐसा ही मनुष्य का समाज हो गया है ! मनुष्य बहुत हैं लेकिन सौन्दर्य के, सत्य के, प्रार्थना के, कोई फूल नहीं खिलते। पृथ्वी आदमियों से भरती चली जाती है, लेकिन दुर्गन्ध से ही, सुगन्ध से नहीं ! घृणा से, क्रोध से, हिंसा से, लेकिन प्रेम और प्रार्थना से नहीं। कोई तीन हजार वर्षों में आदमियों ने पन्द्रह हजार युद्ध लड़े। ऐसा मालूम पड़ता है कि सिवाय युद्ध लड़ने के हमने और कोई काम नहीं किया है। तीन हजार वर्षों में पन्द्रह हजार युद्ध बहुत होते हैं। प्रतिवर्ष पाँच युद्ध हमने लड़े। और अगर किसी एक संबंध में विकास हुआ है तो वो यही, कि हमने आदमी को मारने की कला में अन्तिम स्थिति पा ली है। आज जमीन पर कोई पचास हजार उद्जन बम तैयार हैं। यह आश्चर्य की बात है कि पचास हजार उद्जन बम जरूरत से बहुत ज्यादा हैं, सात गुणा। तीन अरब आदमी हैं तीन अरब आदमी को मारने की सात गुणा तैयारी हमने कर ली है। पच्चीस अरब आदमी हों तो इतने बम उनको भी मार सकेंगे, सुविधा से। लेकिन एक एक आदमी को हमने सात सात बार मारने का इंतजाम किया है कि कहीं बच न जाय भूल चूक से। हालांकि एक आदमी एक ही बार में मर जाता है। लेकिन शायद बच जाय वो दुबारा हम मार सकें फिर भी बच जाय तो हम सात बार मारने का इंतजाम कर रखे हैं। सर्पलस अरेंजमैंट है आदमी को मारने के लिए, पचास हजार उद्जन बम, इतने बम हैं कि पृथ्वी बहुत छोटी है। इसे मिटाने के लिए वह बहुत ज्यादा है। हीरोशिमा और नागासाकी में जो एटम बम गिरा था उस समय लोगों ने सोचा था कि इससे ज्यादा खतरनाक और कोई इजाद न हो सकेगी, लेकिन बीस ही वर्ष में उद्जन बम और सुपर बम ने, अजीब हालत पैदा कर दी और वो यह कि आज हीरोशिमा और नागासाकी में गिरा हुआ बम बच्चों का खिलौना मालूम पड़ता है। उसका कोई मूल्य ही नहीं रह गया है, एक लाख आदमी एक बम में मारे थे वो आज बच्चों का खिलौना बन गया है। क्योंकि हमारे पास जो बम हैं उनकी सीमा, उनकी शक्ति बहुत ज्यादा है। यह पूरे इतिहास में आदमी ने यही अर्जित किया है, विनाश और मृत्यु की इतनी तीव्र आकांक्षा ही अर्जित की है। तो शक होता है कि आदमी कहीं न कहीं बीमार है, अस्वस्थ है रुग्ण है।

स्वस्थ मनुष्य जीना चाहता है, अस्वस्थ मरना चाहता है। और ध्यान रहे जब मरने की आकांक्षा बहुत प्रबल हो या मारने की, तो उसका एक ही अर्थ होता है कि हमारा मन कहीं बीमार हो गया है कहीं कोई खाई, कहीं कोई मनोरोग हमें पकड़े हुए हैं। जीने में आनन्द कम हो गया है। मारने में, मिटाने में आनन्द ज्यादा हो गया है। सुइसाइडियल, आत्घाती प्रवृति मनुष्य में बढ़ती चली गई। अब हम उस जगह हैं जहां किसी भी दिन अपने आपको खतम कर सकते हैं। आइंस्टीन से मरने के कुछ दिन पहले किसी ने पूछा था कि तीसरे महायुद्ध के संबंध में आपका क्या ख्याल है ? तो आइंस्टीन ने कहा था कि तीसरे महायुद्ध के संबंध में मैं कुछ भी न कह सकूंगा, चौथे के संबंध में मैं कुछ कह सकता हूं। उस आदमी ने पूछा कि आप क्या बात कर रहे हैं ? तीसरे के संबंध में कुछ नहीं कहेंगे तो चौथे के कैसे कहेंगे ? तो आइंस्टीन ने कहा कि चौथे के संबंध में एक बात निश्चित कही जा सकती है कि चौथा महायुद्ध कभी नहीं होगा। क्योंकि तीसरे के बाद किसी आदमी के बचने की कोई

उम्मीद नहीं कि चौथा युद्ध भी हो सके। लेकिन तीसरे के संबंध में कुछ भी कहना मुश्किल है।

यह जो हम मृत्यु के द्वार पर आदमी को खींचकर ले गए हैं उसके पीछे क्या कारण होगा ? सबसे पहली बात मुझे यह दिखाई पड़ती है कि आदमी के जीवन में आनन्द, जिसको ब्लिस कहें, के क्षण कम हो गए हैं। जीवन दुःख की लम्बी कहानी हो गया है। और, अगर इतने दुःख हैं जीवन में तो यह परिणाम अनिवार्य होता है। दुःखी आदमी दूसरे को भी दुःख देने के लिए आतुर हो जाता है। और ठीक भी है जो मेरे पास है, वही मैं दूसरे को भी दे सकता हूं। अगर मैं दुःखी हूं तो दुःख ही दे सकता हूं, और कोई भी उपाय नहीं है, और हम सब दुःखी हैं। हमारे चेहरे पर दिखाई पड़ने वाली मुस्कराहटें बहुत झूठी हैं। सच तो यह है कि हमने मुस्कराहटों का आविष्कार भीतर के दुःख को छिपाने के लिए किया हुआ है। हम ऊपर से हंसते रहते हैं कहीं यह भ्रम न पैदा हो कि हम दुःखी लोग हैं। सारी दुनिया में हंसी के फव्वारे फूटते रहते हैं। एक बार ऐसा हुआ कि बुद्ध के पास एक सम्राट मिलने के लिए गया। और उसने बुद्ध से पूछा आप कहीं कभी हंसते भी हैं या नहीं ? तो बुद्ध ने कहा अब भीतर दुःखी ही नहीं रहा तो हंसी की भी कोई जरूरत ही न रही। क्योंकि हंसी भीतर के दुःख को छिपाने के लिए ही थी। हंसते थे ऊपर से, ताकि भीतर का दुःख भूल जाए। नीत्से से किसी ने पूछा था एक बार कि तुम बहुत हंसते हो बहुत खुश मालूम पड़ते हो, नीत्से ने कहा तुम यह बात ही मत छेड़ो। मैं इसलिए हंसता रहता हूं कि कहीं रोने न लगूं। फुरसत ही नहीं रहनी चाहिए, अगर बाकी जगह रह गई बीच में तो रोना आ सकता है। आंसू न आ जायें इसलिए हंसने में शक्ति और समय लगाता रहता हूं क्या आपको पता है कि जैसे जैसे मनुष्य का दुःख बढ़ा है एक और चीज बढ़ी है वो है मनोरंजन के साधन। कभी आपने सोचा है कि मनोरंजन के साधन दुःखी आदमी ही ईजाद करता है। सुखी आदमी इतना सुखी होता है कि मनोरंजन के साधन की उसे कोई जरूरत नहीं होती। वो सुखी होता है, साधन की जरूरत तब पड़ती है जब हम भीतर सुखी नहीं रह जाते। फिर शराब की जरूरत है। फिर सेक्स के नये नये आविष्कार करने पड़ेंगे। फिर फिल्में खोजनी पड़ेंगी फिर टेलीविजन और रेडियो खोजने पड़ेंगे। संगीत खोजना पड़ेगा। और फिर यह भी धीरे धीरे बासे हो जाएंगे। फिर मैसकलीन है मारजुआना है। एल. एस. डी. है। और क्या क्या है, लेकिन वो भी सब बासे हो जाएंगे, वो भी सब पुराने हो जायेंगे। आदमी का दुख इतना है कि वो सब तरह की हँसी के बावजूद उसको मिटा नहीं पाता। वो दुख अपनी जगह रहता है। और भीतर जब बहुत दुख घिर जाये, तो स्वभावतः हमें दूसरों को दुख देने में रस आने लगता है। जब कोई आदमी आनन्दित होता है तब दूसरों को सुख देने में रस पाता है। असल में आनन्दित आदमी की एक ही कसौटी है कि अगर आप दूसरे के सुख में सुखी हो सकें तो आप एक आनन्दित आदमी हैं। और यदि आप दूसरे को सुखी करने में सुखी हो सकें तो आप आनन्दित आदमी हैं। और अगर आप दूसरे को दुख में देख कर रस पाते हों, और दूसरे को सुख में देखकर दुख पाते हों, तो आप दुःखी आदमी हैं।

बड़ी अद्भुत है आदमी की मनोदशा। जब वो किसी दूसरे को दुख में देखता है तो बहुत सहानुभूति प्रकट करता है। बहुत सिम्पैथेटिक मालूम पड़ता है। और उसे ऐसा भ्रम पैदा होता है कि वो दूसरे के दुख में दुखी है लेकिन क्या कभी आपने ख्याल किया कि जब कोई दूसरे के प्रति सहानुभूति प्रकट करता है, तो उसकी आंखों में से एक रस भी दिखाई पड़ता है। वो बहुत आनन्द भी ले रहा है। असल में दूसरे के प्रति सहानुभूति सिम्पैथी दिखाने में भी एक बड़ा मजा है क्योंकि जिसके प्रति हम सहानुभूति दिखाते हैं वो नीचा हो जाता है, हम ऊपर उठ जाते हैं। लोग तलाश में रहते है कि कब आपको सहानुभूति दिखाने का मौका मिल जाये। अगर आपके मकान में आग लग गई हो तो लोग आपको सहानुभूति दिखाने आयेंगे। लेकिन यह वही लोग हैं अगर आपने बड़ा मकान बना लिया होता तो ईर्ष्या से भर गए होते। यह गणित बड़ा अजीब मालूम होता है जो लोग मकान बनाने पर ईर्ष्या से भर गये थे वो मकान

के जल जाने से दुखी नहीं हो सकते। वह दुख दिखा रहे हैं, दुख प्रकट कर रहे हैं लेकिन भीतर उनके दुख नहीं हो सकता क्योंकि जब वो किसी के बड़े मकान को बड़ा होते हुए देख कर खुश नहीं। हुए थे वो छोटा होते देख कर दुखी कैसे हो सकते हैं ?

मैं एक घर में ठहरता था, उन मित्र ने एक बहुत बड़ा मकान बनाया था। जब मैं उनके घर ठहरा था पहली बार, सुबह से शाम तक वो घूम फिर कर मकान को बीच में ले आते थे। कुछ भी बात होती मकान बीच मे आ जाता, कभी उनका स्वीमिंगपूल बीच मे आ जाता, कभी उनके बाथरूम बीच मे आते। कभी उनका बगीचा और लान बीच में आता। मैं तीन दिन वहां था तो मुझे ऐसा लगा कि मुझे उन्होंने वहां अपने मकान के संबध में बातचीत करने के लिए बुलाया हुआ है। दुबारा भी ठहरा था एक बार, तब भी वही मकान को बातचीत चली थी। मुझे ऐसा लगा था कि मकान ज्यादा महत्वपूर्ण है, मकान का मालिक कम महत्वपूर्ण है क्योंकि अपने संबध में उसने कोई बातचीत नहीं की थी। मकान की ही बात थी। फिर तीसरी बार उनके घर मेहमान हुआ तो मकान की बात ही उन्होने नहीं उठाई। मैं तो पहले से ही डरा हुआ था कि अब मकान आया। लेकिन मकान नहीं आया। सांझ होने लगा, रात हो गई, मैंने उनसे पूछा, मकान के संबध में बात कब करियेगा ? उन्होंने कहा छोड़िये जाने दीजिये। मैंने देखा नहीं था कि बाद पड़ौस में एक दुर्घटना हो गई थी। पड़ौस में एक और बड़ा मकान बन गया था। दूसरे दिन जब मैं सुबह उठा तो मुझे दिखाई पड़ा कि कारण क्या है ? वो मेरे साथ बगिया में घूमते थे, तो मैंने कहा कि आप मकान की बात बिल्कुल ही नहीं करते। वही मकान है ? वही स्वीमिंग पूल है। बगीचा और अच्छा हो गया है। फूल और ज्यादा खिल गए हैं। उन्होंने कहा आप बात मत ही कीजिये मकान की। जब से यह पड़ौस में बड़ा मकान खड़ा हो गया है, मन बड़ा उदास हो गया है, बड़ा दुखी हो गया है, लेकिन कोई फिकर न करिये, वर्ष दो वर्ष में इससे बड़ा मकान खड़ा कर लेंगे। तब तक मकान की बात करनी ठीक नहीं। मगर पड़ौस के मित्र मुझे बुला कर ले गए और उन्होंने मकान की बात की। मैंने कहा कब तक जारी रखियेगा मकान की बात। पड़ौस में कोई बड़ा मकान बन जाय तो मुश्किल खड़ी हो जायगी।

हम दूसरे के सुख में जरा भी सुखी नहीं हो पाते। इसलिए दूसरों के दुख में जब हम दुख दिखाते हैं वह बड़ा झूठा होता है। वो डिसेपटिव होता है। और हम हंसते चले जाते हैं तो वो हसी हमने सब ऊपर से इकट्ठी कर ली है। हमने चेहरे बना लिए हैं। एक चेहरा हमारा असली है, जो हम भीतर दबाए रखते हैं। शायद जिसे हम भी न पहचानें, अगर मिल जाय। अगर वो आदमी जो मैं असली में हूं, मैं भी न पहचानूं, अगर वो मुझे मिल जाय। क्योंकि इतने दिन से उससे मुलाकात नहीं हुई, जान पहचान नहीं हुई, यह चेहरा हमने बना रखा है। मनोवैज्ञानिक तो कहते हैं अगर एक कमरे में दो आदमी मिलते हैं दो आदमी नहीं मिलते, कमसे कम छः आदमी मिलते हैं। अगर मैं आपसे किसी कमरे में मिलता हूं तो एक तो मैं हूं जो हूं। और एक वो रहेगा जो मैं आपको दिखला रहा हूं। एक वो रहेगा जो आप मुझ को समझ रहे हैं। मैं भी तीन और आप भी तीन। छः आदमियों की बातचीत चल रही है। असली आदमी तो बहुत पीछे छूट गए और नकली आदमी आकर बातचीत करते हैं। नामालूम कितने ? शक्लें हमने खड़ी कर रखी हैं, जो कि झूठी हैं। लेकिन समाज रोज दुःखी होता चला गया। असल में सुखी आदमी की एक ही शक्ल होती है क्योंकि सुखी आदमी के पास छुपाने को कुछ नहीं होता। दुखी आदमी को बहुत शक्लें ईजाद करनी पड़ती हैं। क्योंकि उसे अपना दुःख छिपाना पड़ता है। उसे दबाने का कोई अर्थ भी नहीं। उसे किसी के कहने से कोई अर्थ भी नहीं। उसे किसी के कहने से कोई फर्क भी नहीं पड़ता।

एक यहूदी फकीर है लियेमन। उसने एक संस्मरण लिखा है। उसने लिखा है कि मैं सारे लोगों को देखता रहा, रास्ते में कोई भी दिखाई पड़ता, हंसता हुआ

दिखाई पड़ता। जो भी मिलता, मौज में दिखाई पड़ता। किसी से पूछता कि क्या हाल है तो वो कहता सब ठीक है, बड़े आनन्द में है। और मैं भीतर देखता तो सिवाय दुख के कुछ भी न पाता। लोग, जिससे भी पूछो कहता है बड़े मजे में है। अकेला मैं ही दुखी था सारे लोग मजे में थे। तो एक रात मैंने भगवान से प्रार्थना की, मुझसे नाराजगी क्या है? सारे लोग खुश हैं जिससे पूछो वही कहता है बडे मजे में है, एक मैं ही गलत आदमी हूं, मैं ही परेशान हूं। मैं तुझसे ज्यादा नहीं मांगता, मैं तुझसे इतनी ही प्रार्थना करता हूं कि मुझे तू किसी अनजान आदमी का दुख दे दे। और मेरा दुख उसे दे दे, मैं तैयार हूं। इस गाँव के किसी भी आदमी का दुख सहने को मैं तैयार हूं। मेरा दुख बदल दे। रात लियेमन ने एक सपना देखा. वो सपना बहुत अद्भुत है। उसने सपना देखा कि रात जैसे उसकी प्रार्थना सुन ली गई है। बहुत बड़ा भवन है और गाँव भर में एक आवाज गूंजी है कि सब लोग अपने अपने दुःख की गठरियां बांध कर उस भवन में पहुंच जाएं तो लियेमन तो सबसे पहले भागा। उसने सोचा कि दूसरे लोग तो शायद जाएंगे ही नहीं क्योंकि उनके पास कोई दुःख ही नहीं, वो सब लोग अच्छे हैं। लेकिन उसने देखा कि लोग उससे भी तेजी से भागे जा रहे हैं। जिन्होंने उसने सुबह पूछा था, कि कहो कैसे हो, और उन्होंने कहा था बहुत मजे में हूं वो भी बड़े बड़े गठरे बाँध कर भागे चले जा रहे हैं। उसे बड़ी हैरानी हुई गाँव में एक आदमी नहीं है! सारा गाँव भागा है अपनी अपनी गठरियां ले कर। उस भवन में सारे लोग पहुंच गए हैं। देख कर वह हैरान है कि गाँव का मेयर भी है, गाँव का पुजारी भी है, गाँव का संन्यासी महात्मा भी है। सारे लोग हैं सभी के पास दुःख की गठरियां हैं। और सबसे बड़ी हैरानी यह कि जितनी बड़ी गठरी लिए वो खड़ा है उससे छोटी गठरी किसी से पास नहीं है। फिर दूसरी आवाज हुई, कि सभी लोग अपने अपने दुःख की गठरियां खूटियों पर टांग दें। सारे लोगों ने दौड़ कर अपनी गठरियां खूटियों पर टांग दी और फिर वो आवाज हुई कि अब जिसको जिसकी गठरी चुननी है चुन ले। लियेमैन ने लिखा है कि मैं घबरा कर भागा। दूसरों की गठरी की तरफ नहीं, अपनी गठरी की तरफ कोई और न उठा ले। क्योंकि कम से कम अपने दुःख पहचाने हुए तो हैं। अनजान अपरिचित लोगों के दुःख, गठरियां छोटी भी नहीं मालूम पड़तीं, बड़ी ही मालूम पड़ती हैं। उसने घबराहट में दौड़ कर अपनी गठरी उठा ली, कहीं कोई और न उठा ले। लेकिन वो और भी चकित हुआ कि सभी ने अपनी अपनी गठरियां उठा ली हैं। सभी ने दौड़ कर उठा ली, क्योंकि सभी को यह डर लगा हुआ था कि कहीं कोई दूसरा न उठा ले। क्योंकि कल तक दूसरे की नकली शक्ल देखी थी, अपना दुख देखा था, दूसरे की हंसी देखी थी, आज वो झूठ हो गया था।

आदमी इतने दुःख में है। इसलिए दूसरे को दुःख देने के नये नये रास्ते खोजता रहता है। रिलीजन के नाम पर खोज लेते हैं, धर्म के नाम पर खोज लेते हैं सताने के रास्ते। टार्चर करने के रास्ते। पौलिटिक्स के नाम पर खोज लेते हैं, राजनीति के नाम पर खोज लेते हैं। हम किसी न किसी बहाने से, किसी को सताने का रास्ता खोज लेते हैं। हमें आदमी को मारना है। आदमी को मारना बहुत मुश्किल पड़ेगा। हिन्दू को मारना आसान है, मुसलमान को मारना आसान है तो फिर हम हिन्दू मुसलमान हो के रास्ते खोज लेते हैं। हिन्दू मुसलमान न लड़े तो सिख हिन्दू भी लड़ सकते हैं। सिख हिन्दू न लड़ जायें, तो गुजराती मराठी लड़ेगा गुजराती मराठी न लड़ जायें तो उत्तर भारती और दक्षिणी भारत के लोग लड़ जायेंगे। कोई भी न लड़ जाय तो आप सोचते हैं कि आप शान्ति से घर में बैठ जायेंगे? पति पत्नि लड़ेंगे, बाप बेटे लड़ेंगे, गुरु शिष्य लड़ेगा, लड़ाई चाहिए! दूसरों को दुख देने का उपाय चाहिए। दूसरे को सताने की, टार्चर करने की व्यवस्था चाहिए। और ऐसा नहीं है बुरे लोग ही सताते हैं दूसरे को, अच्छे लोग भी, जिन्हें हम अच्छा कहते हैं अच्छे ढंग निकाल लेते हैं सताने के अच्छे ढग भी होते हैं। अब एक महात्मा है वो समझा रहा है लोगों को कि उपवास करो क्योंकि भूखे रहे बिना परमात्मा नहीं मिलेगा। यह लोगों को सताने के लिए अच्छा रास्ता खोज लिया है बहुत रिलि-

जियस टैकनीक से सताने जा रहा है लोगों को। सिरके बल खड़े होने को कह रहा है कि सिर के बल खड़े हो जाओ पैरों के बल खड़े होना ठीक नहीं। सिर के बल खड़े होने से परमात्मा मिलता है। परमात्मा ने यह गल्ती नहीं की उसने आदमी को पैर के बल खड़ा किया है और महात्मा कह रहे हैं कि सिर के बल खड़े होने से वह मिलेगा। लेकिन हम सिर के बल खड़े होना शुरू हो जाते हैं तो महात्मा खुश हो जाता है सुखी होना शुरू हो जाता है उसने दूसरों को दुःख देना शुरू कर दिया, टार्चर करने के रास्ते खोज लिये। जिनको हम अच्छे लोग कहते हैं वो भी सताते हैं उनका सताना बड़ा खतर नाक होता है क्योंकि वह अच्छे कारणों से सताते हैं उनका सताना आपके हित में दिखाई पड़ता है। तो बड़ा मुश्किल हो जाता है ! हिटलर से बचना आसान है, गांधी से बचना बहुत मुश्किल है। क्योंकि हिटलर तो सीधा दुश्मन की तरह सताता है, गांधी तो आपके हित में सताते हैं। हिटलर आपकी छाती पर छुरा रख देता है गांधी अपनी पर छुरा रख लेते हैं। वो कहते हैं कि मैं मर जाऊँगा अगर मेरी न मानो। इसको वह अहिंसा कहते हैं ! दूसरे को मारना अहिंसा है अपने को मारना अहिंसा कैसे हो जायेगा ? अगर मैं आपकी छाती पर छुरा रख के कहूं कि मेरी बात मान लें वो अहिंसा है और एनीमल एक्ट है। और अगर मैं अपनी छाती पर छुरा रख के कहूं कि मर जाऊँगा, आग जला कर जल जाऊँगा तो मैं महात्मा हो जाऊँगा ! यह भी एनीमल एक्ट है, यह भी हिंसा है। लेकिन यह अच्छे ढंग की हिंसा है, इससे हम दूसरे आदमी को बड़ी तरकीब से सता रहे हैं। अगर मैं आपके दरवाजे पर बैठ जाऊँगा कहूँ कि मैं भूखा मर जाऊँगा अगर मेरी बात न मानी तो। मेरी बात गलत हुई तो भी, तो यह जो मेरी अच्छे ढ़ंग की हिंसा है, यह आपको मजबूर कर देगी यह आपको सता डालेगी।

बुरे आदमी सता रहे हैं, अच्छे आदमी सता रहे हैं। हम सब एक दूसरे को सताने में लगे हुए हैं। और हमने ऐसी तरकीबें खोज रखी हैं कि पता लगाना मुश्किल हो जाता है। हम कैसे कैसे सता रहे हैं। अगर आप किसी स्त्री को प्रेम करते हैं, तो आप बहुत जल्दी उसे सताना शुरू देते हैं। एक स्त्री आपको प्रेम करती है, तो पता नहीं चलता कि कब उसने आपको सताना शुरू कर दिया। हम एक दूसरे की गर्दन को दबा देते हैं। जिन्हें हम प्रेम करते हैं, उनकी गर्दन पर भी फांसी बन जाते हैं। बेटों को बाप सता लेते हैं जब वह छोटे होते हैं। बच्चे कमजोर होते हैं, और बाप ताकतवर होते हैं। लेकिन बहुत जल्दी नाव उलट जायेगी बच्चे ताकतवर हो जायेंगे, बाप बूढ़े हो जायेंगे। तब बच्चे सताना शुरू कर देंगे। बुढ़ापे में बच्चे सता रहे हैं क्योंकि अब वह ताकत वर हो गए हैं। बाप ने सता लिया है जवानी में, बच्चे कमजोर थे, सताना आसान था। अब जो सता सकता है दूसरे को सता रहा है। हम सब एक दूसरे को परेशान करते हैं। कुछ लोगों ने खोज की है कि सताने वाले, नये नये रास्ते खोजते रहते हैं। औरंगजेब ने अपने बाप को बंद कर दिया था और जब बाप को उसने लाल किले में बंद कर दिया, तो दस पांच दिन के बाद बाप ने उस खबर भेजी यहां अकेले में मेरा मन नहीं लगता है। अगर पच्चीस तीस लड़के मुझे दे दो तो मैं उन्हें पढ़ाने का काम करूं तो मेरा मन लग जाय। औरंगजेब ने अपनी आत्म कथा में लिखवाया है कि मेरे बाप को, दूसरों को सताये बिना इतना बेमानी लगता है जीवन कि उसने तीस लड़के मांग लिये, और उन सबके बीच डंडा लेकर बैठ गया और उनको सताना शुरू कर दिया। उनको शिक्षा देने लगा। इस संबंध में बहुत सी खोज चलती है कि बहुत से लोग जो धंधा चुनते हैं उस धंधे में भी उनकी वृति काम करती है। वो सताने का धंधा चुन सकते हैं। सताने की व्यवस्था चुन सकते हैं। यह जो आदमी है दुःख से भरा हुआ है, यह जो आदमी एक दूसरे को सताये चला जा रहा है और नर्क बना दिया है इस पृथ्वी को। ऐसा मैंने सुना है कि एक आदमी मरा। उसकी पत्नी एक भूत प्रेत बुलाने वाले के पास गई। उससे कहा कि मैंने सुना है कि मृतात्मा को बुला सकते हो। मैं अपने पति के संबंध में खबर लेना चाहती हूं तो उसने उसके पति की आत्मा को बुलाया उसकी पत्नी ने पूछा कि आप मजे में तो हैं ? उसने कहा मैं बहुत बहुत मजे में हूं—

एकदम आनन्द में हूं। तो उसकी पत्नी ने कहा, तुम कुछ और भी स्वर्ग के संबध में बातें बनलाओ तो उसने कहा स्वर्ग ? तुम गलत समझी मैं नर्क में आ गया हूं। उसकी पत्नी ने कहा कि नर्क और बहुत मजे में हो, तो उसने कहा कि अब नर्क पृथ्वी से बहुत सुन्दर, बहुत शान्त, बहुत स्वस्थ, और बहुत आनन्दित है। अब पृथ्वी से नर्क बहुत सुखद है। मैं तो तुलना में कह रहा हूं कि जहाँ से आया हूं मैं मरके, वहां से नर्क बहुत सुन्दर है, स्वर्ग का मुझे कुछ पता नहीं। मैं नर्क में आया हूं, लेकिन मैं तुझे खबर कर दूं, कि नियम बदल गए हैं, पहले जो लोग पृथ्वी पर गुनहा करते थे नर्क भेज दिये जाते थे अब नर्क में जो लोग गुनहा करते हैं, पृथ्वी पर भेज दिये जाते हैं ।

यह जो इतने दुःख से भरा हुआ मनुष्य है इसमें कैसे फूल खिलें ? इसकी जिन्दगी में आखिर बहार कैसे प्रकटे। इसके जीवन में आनन्द की झलक कैसे आये। और अगर आनन्द की झलक न आ पाये, तो आदमी जिया और न जिया बराबर हो गया । और अगर आनन्द को झलक न आ पाये, तो जीवन से जो हमें मिल सकता था वो हम ले ही न पाये। पौधा लगा जरूर, लेकिन फूल न खिले। दिया हम ले आये घर में जरूर, लेकिन कभी उसमें ज्योति नहीं जली। वीणा हमने खरीद ली और घर में ले आये लेकिन उसके तारों पर कभी हमारे हाथ न गए और कभी संगीत पैदा न हुआ। बहुत लोग ऐसी ही वीणा हैं, जिन्होंने वीणा को रख लिया है अपने घरों में लेकिन जिनसे कभी संगीत पैदा नहीं हुआ है। वीणा अकेली संगीत पैदा नहीं कर सकती। और जन्म ले लेना काफी नहीं है। जन्म के बाद एक और जन्म भी चाहिए। जन्म के बाद एक और नया जन्म भी चाहिए। एक जन्म तो मिलता है मां बाप से, एक जन्म स्वयं अपने को देना पड़ता है। जन्म के साथ जीवन नहीं मिलता, सिर्फ वीणा मिलती है। संगीत नहीं मिलता, संगीत तो सीखना पड़ता है लेकिन यह बहुत दुर्घटना की बात है कि आदमी और सब कुछ सीखता है जीवन नहीं सीखता। गणित सीखेगा गणित के बिना भी चल सकता है, भूगोल सीखेगा भूगोल के बिना भी चल सकता है, केमिस्ट्री और फिजिक्स सीखेगा उनके बिना चलता रहा है। सब सीख लेगा। जिन्दगी में जो भी है सब कुछ सीख लेगा, एक चीज छोड़ देगा। जिन्दगी कैसी जी जाये। आर्ट आफ लिविंग, इसे छोड़ देगा। इसके लिए कोई स्कूल नहीं कोई विश्वविद्यालय नहीं, कोई यूनिवर्सिटी नहीं। इसके लिए कोई उत्सुक नहीं। उसका कारण क्या है ? हमने मान लिया है कि जीवन हमें मिल ही गया है अब और क्या करना है ? वीणा घर ले आये अब और क्या करना है ? क्योंकि वीणा मिल गई तो संगीत भी मिल गया है, लेकिन वीणा में संगीत नहीं है। वीणा केवल अवसर बन सकता है, जीवन के संगीत का। जीवन के संगीत को तो सीखना पड़ेगा, अलग से ही सीखना पड़ेगा। वो कला अलग से ही हमें सीखना पड़ेगी । मेरी दृष्टि में, जिसे मैं धर्म कहता हूं वह जीवन की कला है, आर्ट आफ लिविंग। लेकिन जिसे हम आज धर्म कहते हैं वो तो जीवन की कला नहीं मालूम होता। बल्कि मुझे तो ऐसा मालूम पड़ता है कि जीवन से हारे हुए लोग, जीवन से चूक गए लोग, जीवन को खो चुके लोग, रुग्ण, बीमार, विक्षिप्त, ऐसे लोग जीवन की निन्दा कर रहे हैं, उस धर्म में । अब तक जिसे हमने धर्म कहा है वो बहुत गहरे में, जीवन की निन्दा है, कन्डमनेशन है। जीवन का विरोध है। लाइफ निगेटिव है । लाइफ अफरमैटिव नहीं है। जिसे अब तक हम धर्म कहते रहे हैं, दस पांच लोगों को छोड़ देना मनुष्य के इतिहास में, कोई एक कबीर, कोई एक नानक, कोई एक बुद्ध, कोई एक कृष्ण, कोई एक क्राइस्ट, आदमी की ऊगलियों पर नाम गिने जाएं उनको छोड़ दें। उनको छोड़कर बाकी हमें जो धर्म दिखाई पड़ता है मन्दिर वाला, मस्जिद वाला, कुरान वाला, गीतावाला, वो सब के सब धर्म मनुष्य के जीवन की निन्दा कर रहे हैं। और जब धर्म जीवन की निन्दा करते हों, तो वो जीवन को जीने की कला कैसे सिखाए ? जब धर्म निन्दा करते हों तो वो जीवन से मुक्त होने की कला सिखाते हैं ? वो कहते हैं कि मरो कैसे, वो कहते हैं कि असली चीज मरने के

बाद है। मौत के बाद है। अब तक के हमारे सारे धर्म, पृथ्वी को बदलने की, पृथ्वी को ट्रांसफार्म करने की फिकर में नहीं हैं वे कहते हैं कि पृथ्वी तो बेकार है। असार है जीवन, असली जीवन तो मरने के बाद है। किसी स्वर्ग में, किसी मोक्ष में, किसी बैकुण्ठ में, वहां है असली जीवन यह जीवन तो एक सराय है। यह जीवन तो एक वेटिंग रूम है स्टेशन का। वहाँ हम थोड़ी देर बैठेंगे, हमारी ट्रेन आयेगी और हम चले जायेंगे। आप कभी वेटिंग रूम में ध्यान दिये हैं, उनको देखकर पता चलता है कि हर आदमी उसे गंदा कर रहा है, छिलके फेंक रहा है, थूकता है, पान फेंक रहा है और अगर उसे कहिए तो वो कहेगा कि यह वेटिंग रूम है। यह कोई हमारा घर है। दो मिनिट यहां है और चले जायेंगे। उसके पीछे आनेवाला भी यही कहेगा, उसके आगे आने वाला भी यहीं कहेगा। वेटिंग रूम अगर गंदगी बन जायेगा तो आश्चर्य तो नहीं है। वेटिंग रूम में अगर दुर्गन्ध उठने लगे और बैठना मुश्किल हो जाये तो कोई आश्चर्य तो नहीं ? पिछले पाँच हजार वर्षों से निरन्तर, जिनको हम धर्म गुरु कहते हैं, पुरोहित कहते हैं, पंडित कहते हैं, वो जीवन को कह रहा है कि एक सराय है। यह एक वेटिंग रूम है। इसे छोड़ के जाना है, इसे सुन्दर बनाने की कोई जरूरत नहीं। यह सुन्दर बन भी नहीं सकता है। वह यह भी कह रहा है कि यहां सुख संभव ही नहीं है, दुःख ही संभव है। यहां सुख मिल ही नहीं सकता। और ध्यान रहे कि निरन्तर पांच हजार साल तक एक बात का प्रचार किया जाय कि जीवन में सुख मिल ही नहीं सकता, तो सुख मिलना बंद हो जायेगा। इसलिए नहीं कि जीवन में सुख नहीं है बल्कि इसलिए कि पांच हजार वर्ष के प्रचार का कुछ परिणाम होता है।

मैंने सुना है कि अमेरिका में किसी विश्वविद्यालय में एक वैज्ञानिक छोटा सा प्रयोग कर रहा था। वो यह जानना चाहता था कि प्रचार का क्या परिणाम होता है। उसने गणित की एक कक्षा में, एम. ए. की मैथेमैटिक की एक क्लास में, जहाँ कोई पचास लड़के थे दो हिस्सों में बांट दिया। पच्चीस लड़कों को एक कमरे में लाया, पच्चीस को दूसरे में ले गया। पहले नं. के पच्चीस के समूह को, तख्ते पर उसने एक सवाल लिखा, सवाल लिखने से पहले उसने कहा सुन लो ठीक से, यह सवाल तुमसे हो नहीं सकेगा। जो लड़के आगे रीढ़ झुकाकर देख रहे थे कि तख्ते पर क्या लिखा है ? वो कुर्सियों से टिक गए, जब हल ही नहीं हो सकेगा तो बात खतम हो गई उनको बड़ा आश्चर्य हुआ कि जब हल ही नहीं हो सकेगा तो सवाल दे क्यों रहे हैं ? तो उस प्रोफेसर ने कहा कि मैं दे रहा हूं इसलिए कि मैं यह जानना चाहता हूं कि पचास में से कोई एक भी युवक इसको ठीक दिशा में शुरू भी कर सकता है। हल तो तुम से हो नहीं सकता, लेकिन राइट मेथड का शुरूआत भी तुम में कोई कर दे। वो भी चमत्कार है क्योंकि बड़े बड़े गणितज्ञ हार गए, यह सवाल हल होने वाला सवाल नहीं है। वो सवाल लिखता कम है समझाता ज्यादा है। यह सवाल हल होने वाला नहीं है। वो आधा सवाल लिखता है और फिर कहता है कि तुम ज्यादा परेशान मत हो, यह हल होगा नहीं। यह हल हो सकता ही नहीं। यह सवाल बहुत ही कठिन है। शायद दुनियां में आइनस्टीन जैसे दो एक लोग इसको हल कर सकते हैं पर अब तो आइनस्टीन भी मर गया है कुछ आशा नहीं, कोशिश, करो, उन लड़कों ने कलमें उठाई हैं लेकिन कलमों के साथ उनकी आत्मा नहीं लगी। हाथ हैं सिर्फ, आत्मा तो पीछे हट गई क्योंकि जब हल ही नहीं हो सकता है तो चित्त ने साथ छोड़ दिया है। सवाल हल कर रहे हैं, जानते हैं, कि हल नहीं हो सकता। वो इन्हें छोड़कर दूसरे कमरे में गया है, वही सवाल बोर्ड पर लिखा है लड़कों से उसने कहा है कि सवाल बहुत सरल है, मैं आशा भी नहीं करता कि तुम में से एक भी विद्यार्थी ऐसा होगा जो इसे हल नहीं कर पायेगा, सभी हल कर लेंगे। जो कुर्सियों से टिककर बैठे थे वो भी आगे सरक आये। लेकिन एक युवक ने पूछा जब सब हल कर लेंगे तो आप दे क्यों रहे हैं ? तो उसने कहा कि हम देखना चाहते हैं कि क्या कोई एकाध विद्यार्थी इस कक्षा में ऐसा भी आ गया है जिससे यह सवाल हल न हो पाये। इससे नीचे की कक्षा के लड़कों ने

यह सवाल हल कर लिया है। सिर्फ यह जानना चाहते हैं कि क्या कोई एकाध लड़का ऐसा भी आ गया है इस कक्षा में कि उससे इतना सरल सवाल न बन सके ! बो सभी लड़के सवाल हल करने में लग गए हैं उनकी पूरी आत्मा उनके साथ है। बड़ी आश्चर्यजनक बात हुई। उस पहली कक्षा में सिर्फ तीन लड़के, पच्चीस में से सवाल हल कर पाये, बाकी बाईस विद्यार्थी नहीं कर पाये और दूसरी कक्षा में तेइस विद्यार्थी कर पाये सिर्फ दो नहीं कर पाये। इतना बड़ा फर्क पैदा हो गया। यह एक ही कक्षा के विद्यार्थी हैं और एक ही जैसा सवाल।

पांच हजार साल से निरन्तर मनुष्य को समझाया जा रहा है, जीवन दुःख है, जीवन असार है, जीवन पाप का फल है, जीवन से छूट जाना है, मुक्त हो जाना है, किसी तरह भी दुबारा जीवन में नहीं आना है। रविन्द्र-नाथ मर रहे थे एक मित्र उनके पास गए और कहा कि छोड़ो यह कविताएं, वो मरते वक्त भी लिख रहे थे कहा छोड़ो यह कविताएं, क्यों परेशानी उठा रहे हो। अब तो भगवान से यह प्रार्थना करो कि अब दुबारा जन्म न मिले। रविन्द्रनाथ ने कहा कि ऐसी प्रार्थना मैं न कर सकूंगा क्योंकि मैंने तो उसके जीवन में इतना आनन्द जाना है, इतना संगीत, इतना सौन्दर्य, कि मैं एक ही प्रार्थना करता रहूंगा मरते वक्त, अगर मुझे अयोग्य न पाया हो तो एक बार और जीवन में भेज देना। अगर योग्य न पाया हो तो तब बात अलग है। तेरा जीवन बहुत अद्भुत था मरते क्षण भगवान को धन्यवाद देता हुआ मरूंगा कि तूने मुझे मौका दिया है, अपात्र को जिसकी कोई स्थिति न थी कि जीवन में आये उसे भी तूने जीवन दिया है और अगर थोड़ा भी पाया हो कि मेरी योग्यता है तो मुझे एक मौका और देना। यही प्रार्थना करते हुए मरूंगा। निश्चित ही रविन्द्रनाथ जीवन को और तरह से ले रहे हैं। लेकिन पांच हजार साल के इतिहास में धर्मगुरुओं ने जीवन को निन्दा के स्वर में ही लिया है। उसका विरोध ही किया है। उसको किसी तरह नष्टकर डालने की ही बात की है। इसका परिणाम हुआ कि आज मनुष्य जो इतना दुःखी है उसमें इन सब शिक्षाओं का हाथ है। उसके दो परिणाम हुए एक तो यह हुआ कि हमने कहने से स्वीकार कर लिया कि जीवन दुःख है तो सुख के द्वार खोजने की यात्रा बन्द कर दी। हमने सत्य की खोज बंद कर दी। ज्यादा से ज्यादा एक ही रास्ता रह गया है, जीवन दुःख है तो ज्यादा से ज्यादा, इस दुःख भूलने का उपाय कर लो, इतना ही काफी है, शराब पी लो तो दुख भूल जाता है भूल जाता है, मिटता नहीं, सिनेमा देख लो, एक नर्तकी का नृत्य देख लो तो थोड़ी देर के लिए दुःख भूल जाता है लेकिन मिटता नहीं। यह जरा बुरे ढंग के भुलावे हैं। अच्छे ढंग के भुलावे हैं भजन कीर्तन करो, मंजीरा बजाओ, नाचो चिल्लाओ इससे भी दुःख भूल जाता है, मिटता नहीं। तो आदमी ने अच्छे और बुरे ढंग के नशे खोजे हैं क्योंकि एक बात तो पक्की हो गई जीवन में आनन्द तो असंभव है, जीवन में आनन्द हो ही नहीं सकता।

मैंने एक कहानी सुनी है। पता नहीं कहां तक सच है। मैंने सुना है कि स्वर्ग के रेस्टरां में, एक दिन तीन बड़े अजब लोगों का मिलना हुआ। बुद्ध, कन्फ्युशियस और लाओत्से। तीनों एक दिन स्वर्ग के एक रेस्टरां में मिल गए। पता नहीं यह कहां तक सच है। पता नहीं, किस कुरान में यह बात अभी तक लिखी गई या नहीं लिखी गई। और जब वह तीनों टेबल के किनारे बैठकर गपशप करने लगे, तो एक अफसरा हाथ में जीवन रस से भरे हुए एक कलश को लेकर आई और उसने बुद्ध के पास आकर कहा कि जीवन रस लाई हूं, चखोगे ? बुद्ध ने फौरन आँख बंदकर ली और कहा व्यर्थ है असार है, कुछ अर्थ नहीं, कुछ सार नहीं ! आंख भी बंद कर ली। कन्फ्यूशियस ने आधी आंख खुली रखी और आधी आंख बंद रखी। क्योंकि वो गोल्डन मीन को मानता था, मध्य कहीं भी एक्सट्रीम पर नहीं जाना। न पूरी आंख खोलना न पूरी बंद करना। उसने आधी आंख खोल करके धीरे धीरे से देखा और कहा कि थोड़ा सा चखके देखेंगे, पियूंगा नहीं क्योंकि पीना एक अति हो जायेगी,

नहीं पियूंगा, तो भी अति हो जायेगी । चखे लेता हूं, उसने चखा और कहा कि बेसवाद है। लाओत्से ने पूरी की पूरी सुराही हाथ में ले ली और पी गया। जब वह पूरा पी गया तो नाचने लगा, तो उससे पूछा कि कैसा लगा जीवन ! लाओत्से ने कहा बिना पूरा पिये पता कैसे चल सकता था ? बुद्ध से उसने कहा तुमने आंख ही बंद कर ली, तुम्हारा निर्णय सही नहीं हो सकता ! क्योंकि बिना जाने ही तुमने आंख बंद कर ली। कन्फ्यूशियस से कहा कि तुमने सिर्फ चखा और जब तक जीवन नशे में न पहुंच जाये, खून न बन जाये, रग रग रोम रोम में दौड़ने न लगे, पता कैसे चलेगा । जीभ से चखने से कुछ पता चल सकता है जीभ तो द्वार है । तुमने जिसे द्वार से ही लौटा दिया। लाओत्से नाच रहा है और कह रहा है कि तुम पूरे जीवन को पी लो। तो जीवन का आनन्द उपलब्ध हो जायेगा। लेकिन लाओत्से जैसी बात कहने वाले पृथ्वी पर बहुत कम हुए हैं, पृथ्वी पर जिन लोगों ने शिक्षायें दी, वे लोग जीवन के विरोध में खड़े हैं। कुछ कारण हैं। उनके जीवन के विरोध में खड़े होने का भी कुछ कारण है। कारण यही है कि उन्होंने वीणा को संगीत समझ लिया फिर भी उससे संगीत पैदा न हुआ। उन्होंने कहा तोड़ दो, किसी मतलब की नहीं। लेकिन उन्हें तो यह ख्याल ही नहीं कि वीणा संगीत पैदा ही नहीं करती। वीणा सिर्फ संगीत को पैदा करने के लिए मौका बन सकती है। संगीत उतर सकता है। कुछ और भी करना पड़ेगा। जीवन को अगर हमने मान लिया कि मिल गया जन्म के साथ तो हमसे भूल हो गई। इस भूल को तोड़ देने की जरूरत है और अगर यह भूल टूट जाये किसी के जीवन में, तो जीवन में इतना आनन्द है कि जिसका हिसाब लगाना, कि जिसकी कल्पना करना और जिसे तौलना असंभव है, और जीवन के आनन्द को जो अनुभव करता है वही परमात्मा को भी अनुभव कर पाता है। क्योंकि परमात्मा यानी जीवन की गहराई, परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं जो कहीं बैठा है । कि कहीं आपको मिल जाये। जीवन की जितनी गहराई में हम उतर जाते हैं परमात्मा के उतने ही निकट हम पहुंच जाते हैं। जीवन मे जितनी दूर हम खड़े रह जाते हैं परमात्मा के उतनी दूर ही हम हो जाते हैं। और यह बड़ आश्चर्य की बात है कि सारे धर्मों ने हमको जीवन से दूर रखा। परिणामतः हम परमात्मा से भी दूर होते गए। यह बात उल्टी मालूम पड़सकती है कि हमारे सारे महात्मा किसी न किसी अर्थों में परमात्मा के दुश्मन सिद्ध हुए। क्योंकि वो यह कहते हैं कि जीवन को जियो ही मत। जीवन को जीना ही गुनाह है । भागो, जीवन से बचना है, एसकेप करना है। इसलिए जहां जहां जीवन हो वहां वहां से भाग जाओ । जहां जीवन में गहरे उतरने का द्वार दिखे वहां वहां से भागो, वहां रुकना मत, कहीं जीवन बुला न ले, कहीं जीवन आमंत्रित न कर दे । जंगल में भगाया है हमें, मनुष्य को मनुष्य से तोड़ा है, पतियों को पत्नियों से तोड़ा है, बच्चों को बाप से तोड़ा है, बाप को बेटों से तोड़ा है, धर्म ने जीवन को तोड़ने के उपाय किए हैं सारे। जब कि मेरी समझ में सच्चा धर्म जीवन से जोड़ेगा, तोड़ेगा नहीं। क्योंकि अगर कहीं कोई परमात्मा है तो निश्चत ही मृत्यु की शक्ल में नहीं है । जीवन की ही शक्ल में है। और कहीं अगर कोई परमात्मा है तो हम उसे अपनी जीवनधारा की गहराई में उतरकर ही पहचान सकेंगे। अपनी ही नसों में उसे बहता हुआ अनुभव कर सकते हैं। अपनी ही सांसों में उसे अनुभव कर सकते हैं। अपनी ही आँखों से उसे देखता हुआ अनुभव कर सकते हैं। और अपने ही हाथों से उसे प्रेम करता हुआ जान सकते है। अगर किसी दिन परमात्मा से कोई मिलना होगा, तो वह जीवन की विराट धारा की तरह होता है। वह कहीं बैठा नहीं हुआ है, शैया पर। हमने राजाओं को शक्लों में परमात्मा को गढ़ लिया है, बिठा दिया है उसको सिंहासनों पर, मुकुट बांध दिये हैं । कहीं कोई ऐसा परमात्मा नहीं है। ऐसा कोई परमात्मा नहीं है जो हमें मिल जायगा, हाथ जोड़कर उसके द्वार पर खड़े हो जायेंगे और वह हम पर कृपा कर देगा। परमात्मा हमारे भीतर चौबीस घंटे रह रहा है। हम परमात्मा की लहरें हैं लेकिन लहर अगर गहरे में चली जायेगी तो सागर हो जाती है। क्योंकि लहर के नीचे सागर मौजूद है। और लहर अगर बाहर ही देखती रहे तो लहर ही रह जाती है। फिर वह सागर नहीं हो पाती है। कभी सागर के किनारे

जाकर देखें तो लहरें दिखाई पड़ती हैं, सागर दिखाई नहीं पड़ता । आपने कभी सागर देखा ? सागर तो दिखाई पड़ता ही नहीं, लहरें ही दिखाई पड़ती हैं । सागर तो गहरे में छिपा है । ऊपर तो लहरें हैं । और लहरें भी अगर देख सकती हों अपने बाहर तो लहरें भी समझती होंगी कि पड़ोस की लहर मुझसे अलग है । क्योंकि पड़ोस की लहर जब उठती हैं तब मैं गिर रही हूं और जब मैं उठती हूं तो पड़ोस की लहर गिर जाती है तब हम दोनों एक नहीं हो सकते । पड़ोसी मर जाता है मैं जिन्दा हूं तब हम दोनों एक कैसे हो सकते हैं । अभी पड़ोसी जवान है मैं बूढ़ा हूं तब हम एक कैसे हो सकते हैं । पड़ोसी स्वस्थ्य है और मैं बीमार हूं तब हम दोनों एक कैसे हो सकते हैं । अगर एक लहर भी अपने चारों तरफ देखती होगी, कि कोई लहर गिरती है, कोई उठती है तो कैसे मान सकती हूं कि सभी लहरें एक हैं । नहीं नहीं लहर कभी नहीं मानेगी, लहर नहीं मान सकती कि हम एक हैं । लहर कहेगी कि मैं अलग हूं । और, लहर अगर सागर को खोजने निकल जाय तो वो मुश्किल में पड़ जायेगी । वो अगर पूछने लगे चांद तारों से कि सागर कहाँ है ? पूछने लगे किनारे पर खड़े हुए दरख्तों से, पूछने लगे लोगों से, सागर कहाँ है ? तो लहर मुश्किल में पड़ जायेगी क्योंकि सागर, सागर लहर के भीतर है । सागर लहर के नीचे है । बड़े मजे की बात है सागर तो बिना लहर के हो सकता है पर लहर बिना सागर के नहीं हो सकती । लहर सिर्फ एक हिस्सा है । सागर की छाती पर उठ गया हिस्सा है, और कुछ भी नहीं । अभी गिर जायेगा और सागर हो जायेगा । हम सब भी लहरें हैं । अस्तित्व के सागर हैं परमात्मा के सागर है । कहां खोजने लगे हैं हम परमात्मा को । जिसे हम खोज रहे हैं वो हमारे भीतर, हर घड़ी, मौजूद है । लेकिन धर्मों ने एक झूठा परमात्मा खड़ा किया है । जिसे खोजना पड़ता है, वो हमारे भीतर नहीं है । वह हम सब के साथ मौजूद नहीं है । वो कहीं दूर है । उसके लिए यात्रा करनी पड़ती हैं । निश्चित ही कुछ कारण हैं अगर परमात्मा इतना ही निकट है, जितना सागर और लहर, अगर परमात्मा इतना ही निकट है, तो फिर धर्मगुरू की बीच में कोई जरूरत न रह जायगी । बीच के एजेन्ट और दलालों को बिदा कर देना पड़ेगा । दलाल की जरूरत तब होती है जब दूर से संबंध बनाने होते हैं । तब बीच में मीडियम की जरूरत पड़ती है । परमात्मा और आदमी के बीच पुरोहित खड़ा होने को जगह नहीं है । इतनी भी जगह नहीं है । लहर और सागर के बीच कहां पुरोहित को खड़ा करियेगा । वहां कोई इतनी जगह नहीं है और अगर पुरोहित बीच में खड़ा हो गया, तो सागर और लहर को जोड़ेगा नहीं, तोड़ेगा और अगर बीच में, सागर और लहर के बीच में, कोई पुरोहित खड़ा हो गया तो सिर्फ लहर को सागर से तोड़ेगा, जोड़ेगा नहीं । क्योंकि बीच की चीज तोड़ेगी, जोड़ेगी कैसे ? परमात्मा और आदमी के बीच पुरोहित ने तोड़ने वाले का काम किया है जोड़ने वाले का काम नहीं किया है । क्योंकि यहां इतनी ही निकटता है जैसे सागर और लहर की है । लेकिन हम उसे कहीं और खोज रहे हैं । दूर खड़ा किया है, क्योंकि अगर दूर न हो तो परमात्मा का कौन पूछेगा मार्ग, अगर दूर न हो परमात्मा तो कौन पूछेगा विधि, कौन पूछेगा साधन, अगर दूर न हो परमात्मा तो गुरू कौन बनायेगा, अगर दूर न हो परमात्मा तो गाईड कौन खोजेगा । परमात्मा को दूर रखना एकदम जरूरी है अन्यथा बीच से सारा वह व्यवसाय, सारा धंधा खो जाता है । पुरोहित का ट्रेड सीक्रेट, जो है, उसका जो राज है धंधे का, वो यही है कि परमात्मा को दूर रखो, परमात्मा निकट है इसलिए झूठा परमात्मा ही दूर हो सकता है, उसे खड़ा कर दिया है । फिर निश्चित ही हजार तरह के पुरोहित हजार तरह के परमात्मा हैं । हिन्दू का अपना परमात्मा है, मुसलमान का अपना, ईसाई का अपना है अब परमात्मा भी अनेक प्रकार के हैं । मैंने सुना है कि एक फकीर हुआ । अबुयहीक वह एक रात सोया, वो रात सोया तो उसने एक स्वप्न देखा, बहुत दिन से चाहा था कभी परमात्मा की नगरी में पहुंच जायें, तो वह पहुंच गया हैं वो परमात्मा की नगरी में पहुंच गया है बड़े दिये जले, बड़ी रोशनी हुई बड़े फुलझड़ियां और पटाखे फूट रहे हैं । उसने पूछा कि क्या है ? तो किसी ने कहा परमात्मा

का जन्म दिन है। उसने कहा बड़ा अच्छा हुआ, हजारों लाखों लोग सड़क पर निकल रहे हैं परमात्मा की शोभा यात्रा, प्रोसेसन निकलने वाला है। वह भी किनारे खड़ा हो गया है। सबसे पहले, एक बहुत बड़े रथ पर सवार एक बहुत महिमावान व्यक्ति दिखाई पड़ा। उसने पड़ोस में खड़े हुए लोगों से पूछा कि यह परमात्मा है ? पड़ोस के आदमी ने कहा कि यह ईसामसीह है। परमात्मा नहीं, यह जीसस क्राइस्ट है। लाखों करोड़ों लोग जीसस के पीछे हैं और जिसस जिन्दाबाद, के नारे लगा रहे हैं। फिर वो जलूस आगे बढ़ गया। पीछे एक बहुत बड़े शानदार रथ पर सवार हुये कोई बहुत महिमाशाली व्यक्ति थे। पूछा उसने कि यह परमात्मा है ? किसी ने कहा यह राम हैं। उसके पीछे हिन्दू हैं तो राम का जय-जयकार कर रहे हैं। और फिर ऐसा ही जलूस बढ़ता गया और रात गहरी होती गई, और बुद्ध भी निकले, और महावीर भी निकले, नानक भी निकले, सारे अद्भुत लोग भी निकले। और उनके पीछे उनके भक्तों की जमात भी निकली और फिर रास्ते सुनसान हो गए और देखने वाले लोग चले गए। उस फकीर ने कहा कि अभी तक परमात्मा तो निकला नहीं और फिर एक बहुत ही बूढ़े से घोड़े पर सवार एक आदमी निकला लेकिन अब पूछने को भी कोई न था उसने उस बूढ़े आदमी को पूछा कि आप तो परमात्मा नहीं है ? उसने कहा मैं ही हूं। उस फकीर ने कहा आपके साथ कोई दिखाई नहीं पड़ रहा है तो उस परमात्मा ने कहा कि लोग बट गए है कुछ राम के साथ हो गए हैं कुछ कृष्ण के साथ हो गए हैं, कुछ क्राईस्ट के, कुछ बुद्ध के और नानक के। मेरे साथ कोई भी नहीं, मैं बिल्कुल अकेला पड़ गया हूं वह घोड़ा ही मेरे साथ है। यह भी कहता कि जाने दो, किसी और की सवारी बन जाने दो, वैसे यह घोड़ा मेरे साथ है यह भी बहुत बार कहने लगता है कि जाने भी दो, कोई आगे पीछे भी नहीं दिखाई पड़ता। दूसरे भी घोड़े बहुत मजा ले रहे हैं, कोई क्राइस्ट का घोड़ा है, कोई राम का घोड़ा है, कोई बुद्ध का घोड़ा है। मुझे जाने दो। यह घोड़ा ही एक है और मेरे साथ कोई भी नहीं है तुम यहां कैसे खड़े रह गए, बड़ी अनहोनी घटना। तुम यहां खड़े कैसे रह गये। घबराहट में उस फकीर की नींद खुल गई, उसे पसीने की बूंदे आ गई, उसकी छाती धड़क रही है भागा हुआ पास पड़ोस में गया है। उसने कहा मैंने एक बहुत बुरा सपना देखा है जिससे भी उसने कहा उसी ने कहा बड़ा बुरा सपना है फकीर होकर ऐसे सपने नहीं देखने चाहिए। यह भले आदमी के सपने नहीं हैं यह तो तूने कैसा सपना देखा है तुम तो कम से कम मुहम्मद के आदमी हो, मुसलमान हो, तुम्हें तो कम से कम मुहम्मद के जलूस में शामिल हो जाना चाहिए था। यह सपना अच्छा नहीं देखा तुम रुके ही क्यों परमात्मा के लिए। एक ही परमात्मा है और उस एक ही परमात्मा का एक ही पैगम्बर है मुहम्मद तुम उसके साथ क्यों नहीं हो लिये। पता नहीं बूढ़ा धोखा तो नहीं दे गया, पता नहीं किस तरह का आदमी था। हमेशा, ठीक ठीक रास्ते से जाना चाहिए। प्रमाणित रास्ते से जाना चाहिए था। मुहम्मद से पूछना चाहिए था तुम सीधे क्यों पूछ लिये उस बूढ़े से, पता नहीं बूढ़े ने धोखा न दे दिया हो, पता नहीं वो बूढ़ा कौन था। कभी ऐसा मत जाना, सदा मुहम्मद से पूछ कर जाना। असली परमात्मा की खबर मुहम्मद को है वो फकीर बड़ी मुश्किल में पड़ गया जिससे भी पूछा, उसी ने कहा कि तुमने बड़ा गलत सपना देखा है। अगर वह फकीर मुझे मिल जाता तो मैं उसे कहता कि तुमने सपना देखा ही नहीं, तुमने सत्य देखा है। यह सपना नहीं यह सत्य है। ऐसे ही आदमी बट गये हैं। परमात्मा के साथ कोई भी नहीं। और जिसे परमात्मा के साथ होना है उसे, उसे सब तरह के बटाव छोड़ देने पड़ेंगे। जिसे परमात्मा के साथ होना है उसे बीच के पुरोहित को नमस्कार कर देनी होगी कि आप जायें। मेरे उसके बीच कोई फासला नहीं है। और अगर मेरे और उसके बीच कोई फासला है तो दुनिया की कोई भी ताकत उसे पूरा कर भी नहीं सकती। या तो फासला नही है और अगर फासला है तो पूरा होने का कोई उपाय नहीं। कैसे पूरा करियेगा, अगर परमात्मा और मेरे बीच फासला है तो कैसे पूरा होगा ? अगर मेरे और उसके बीच फासला है

तो एक ही तरफ से हो सकता है कि उसने ही चाहा हो। अगर परमात्मा ही ने फासला चाहा है तो फासला मिटाना असंभव है। या तो फासला है तो मिटेगा नहीं, और नास्तिक ठीक कहते हैं कि बात छोड़ो परमात्मा की। कोई परमात्मा नहीं है। और या फिर फासला नहीं है, तो आस्तिक गलत कहते हैं कि बीच में पुरोहित को लेना पड़ेगा।

नहीं, नहीं फासला नहीं है हम उसी की ही लहरें हैं। असल में, परमात्मा शब्द की बात बंद कर देनी चाहिए। उसकी बातचीत से ही फासला पैदा हो जाता है। ऐसा लगता है कि कोई दूसरा है, अलग है। नहीं जीवन की धारा का ही वो नाम है। जीवन है। अच्छा हो कि आने वाली दुनिया से हम परमात्मा का नाम लेना बंद कर दें और कहें जीवन है और कहें कि जीवन को जीने की कला का नाम परमात्मा है। और पूरे जीवन को, टोटल, सामूहिक जीवन को जान लेना परमात्मा को जान लेना है। निश्चित ही अगर ऐसा धर्म विकसित हो तो वह इस पृथ्वी का धर्म होगा। ऐसा धर्म विकसित हो तो वह जीवन की निन्दा नहीं करेगा, क्योंकि जीवन को जानना हो तो जीवन की निन्दा नहीं की जा सकती। और अगर ऐसा धर्म होगा तो जीवन के संगीत, जीवन की वीणा को बजाना चाहेगा। तो निश्चित ही वो जीवन की वीणा को छोड़कर भाग जाने को, एसकेपिसट के लिए नहीं कहेगा। असल में, अगर दुनिया धार्मिक हो तो न वहां गृहस्थ होंगे और न वहां संन्यासी होंगे। वहां ऐसे गृहस्थ होंगे जो संन्यासी भी हैं। अगर दुनिया ठीक से धार्मिक हो तो वहां संन्यासी और गृहस्थ जैसी दो चीजें नहीं होंगी। वहां ऐसे गृहस्थ होंगे जो संन्यासी भी हैं। वहां जीवन ही संन्यास होगा। वहां जीवन के भीतर, जीवन के बीच और जीवन के पार होने की कला होगी। लेकिन इस पुरानी दुनिया में आदमी को दो हिस्सों में ऐसे तोड़ दिया, जिसको परमात्मा को खोजना है वह जीवन को छोड़ कर जाय। और याद रहे कि जो जीवन को छोड़ कर के जायेगा वो परमात्मा को कभी नहीं पा सकेगा। और उस पुराने धर्म ने यह भी कहा कि जिसको जीवन में रहना है वो परमात्मा को कभी न खोज सकेगा। जो छोड़ के गया वो खोज न पाया और जो जीवन को छोड़कर नहीं गया वो निराश है, वो कहता है अगर जीवन में रहेंगे तो परमात्मा को कैसे खोज सकेंगे। दोनों स्थितियों में नुकसान हुआ है। दोनों स्थितियों में धर्म की हानि हुई है। अगर हम जगत को धार्मिक देखना चाहते हैं और ध्यान रहे कि अगर जगत धार्मिक न हो तो आदमी कभी आनन्दित नहीं हो सकता, शान्त नहीं हो सकता, सँगीत पूर्ण नहीं हो सकता। अगर हम जगत को धार्मिक देखना चाहते हैं तो हमें धर्म की पूरी परिभाषा बदलनी पड़ेगी। हमें धर्म का पूरा भवन बदलना पड़ेगा। हमें धर्म की बिल्कुल एक नये आयाम में, एक नये डायमेंशन में यात्रा शुरू करनी पड़ेगी। ऐसा धर्म जो जीवन विरोधी नहीं है, जीवन को स्वीकार करता है। जीवन का प्रेमी है। एक छोटी सी कहानी और मैं अपनी बात को पूरा करूंगा।

मैंने सुना है जापान में एक सम्राट था। एक रात अपने घोड़े पर सवार होकर अपने गांव में घूमता था। सर्द रातें थीं, ठंड के दिन थे, और बहुत जोर से सर्दी पड़ती थी। घर के बाहर कोई रात में मिलता भी नहीं था। लकिन एक फकीर एक वृक्ष के नीचे ठिठुरता रहता। एक दिन, दो दिन, तीन दिन सम्राट ने खबर लगाई कि यह आदमी कौन है। वजीर खबर लाये कि यह बहुत अद्भुत आदमी है, साधारण आदमी नहीं है। तो सम्राट चौथे दिन उसके पास गया घोड़े से उतरा उस फकीर के पैर पकड़े और कहा कि बड़ी कृपा होगी यहां क्यों पड़े है हम पर कृपा करें और महल में चले चलें। कहा तो उसने यह जरूर, लेकिन अचेतन, अन-कांशियस में, अपने भीतर वो यही सोच रहा था कि संन्यासी जरूर इन्कार कर देगा क्योंकि सन्यासी की परिभाषा ही यही है कि जो इन्कार कर दे। ऊपर से निमंत्रण दिया उसने, लेकिन बहुत गहरे में वो जानता था कि संन्यासी इन्कार कर देगा। लेकिन उसे पता नहीं था कि यह संन्यासी बहुत और तरह का संन्यासी है। सम्राट ने यह कहा तो संन्यासी ने कहा जैसी मर्जी, जो

उठ कर घोड़े पर बैठ गया अब सम्राट नीचे था। सम्राट के मन में बड़ी शंका और संदेह उठ गया। सम्राट ने सोचा यह कैसा सन्यासी है ? क्योंकि संन्यासी तो वह है जो जीवन को ठुकराये। मैंने कहा महल में चले चलो, तो उसने एक बार भी न कहा कि मैं संन्यासी हूं मैं महल में न जाऊंगा। वो तो बैठ ही गया है घोड़े पर। मजबूरी थी निमंत्रण दे दिया था अब वापिस भी लेना बहुत कठिन था। सम्राट को पैदल ही घोड़े की लगाम पकड़ कर महल तक लौटना पड़ा। संन्यासी शान से घोड़े पर बैठा। घर पहुंच गया सम्राट ने अच्छे से अच्छे भवन में उसको ठहराया श्रेष्ठतम व्यवस्था की। उसने सब स्वीकार कर लिया। मखमल की गद्दियां थी वो शांत लेटा रहा। सम्राट ने कहा कि कैसे गलत आदमी को निमंत्रण दे आया क्योंकि संन्यासी तो वह है जो जीवन को ठुकराये। असल में सम्राट इसलिए तो संन्यासी के चरणों में सिर झुकाता है क्योंकि सम्राट जिसे नहीं ठुकरा पाता है उसे इसने ठुकरा दिया है। यह कैसा संन्यासी है लेकिन एकदम हिम्मत न पड़ी। छः महीने बीत गए। छः महीने के बाद एक दिन वो संन्यासी बगीचे में घूम रहा था तो सम्राट ने संन्यासी से पूछा कि मुझे एक सवाल पूछना है, मन में एक संदेह उठता है। संन्यासी ने कहा बड़ी देर लगाई सवाल पूछने में, संदेह तो उसी रात उठ गया था, छः महीने लगे हिम्मत जुटाने में बड़े कमजोर आदमी लगते हो। बोलो क्या संदेह है ? उस सम्राट ने कहा संदेह नहीं अब ऐसा सवाल बार बार मन में उठता है कि अब आपमें और मुझमें फर्क क्या रह गया है ? तो संन्यासी ने कहा जवाब चाहिए। तो अच्छा हो जहां यह संदेह उठा है हम वहां चलें। सम्राट ने कहा उससे क्या मतलब उसने कहा नहीं वहीं ठीक रहेगा। वह चले गांव के बाहर पहुंचे। वो वृक्ष भी आ गया। सम्राट ने कहा अब बता दें, संन्यासी ने कहा थोड़ा और चलें वैसे मैं बता ही रहा था। सम्राट ने कहा मैं कुछ समझा नहीं आप कुछ बोलते नहीं। फकीर ने कहा मैं बता ही रहा हूं उस दिन भी बिना बोले बता दिया था, संदेह मेरे बिना बोले ही उठ गया था। जवाब भी मिल सकता है, सामने नदी पार कर लें। सम्राट नदी पार कर लिया, दोपहर हो गई, संन्यासी से कहा कि अब बता दें उसने कहा अब जाना मुश्किल है, मेरे राज्य की सीमा आ गई है। तो संन्यासी ने कहा हमारी कोई सीमा नहीं है। थोड़ा और आगे चलें, तो सम्राट ने कहा मैं न जा सकूंगा दोपहर बड़ी हो गई है लोग मुझे खोजने लगेंगे। तो संन्यासी ने कहा कि जवाब मेरा यही है कि मैं आगे जाता हूं मेरे साथ चलते हैं ? तो सम्राट ने कहा कि मैं कैसे चल सकता हूं मेरा घर, मेरी सम्पत्ति, मेरी सारी जायदाद, मैं कैसे चल सकता हूं ? संन्यासी ने कहा फर्क समझ में आया ? मैं जा रहा हूं वो सम्राट ने फिर पैर पकड़ लिये और कहा कि संदेह मिट गया। एक परम ज्ञानी को मैंने खो दिया। छः महीने मैंने आपका कोई सतसंग ही नहीं किया क्योंकि मैंने तो कहा था आप तो भोगी हैं। चलें वापिस, तो सन्यासी ने कहा मैं फिर चल सकता हूं, घोड़े पर फिर बैठ सकता हूं, लेकिन संदेह फिर उठ जायेगा अब तो मुझे जाने दो, अब तुम मुझे जाने दो। मुझे कोई कठिनाई नहीं है, लौटने में। क्योंकि नीम के वृक्ष के नीचे जितना मैं परमात्मा के निकट था तुम्हारे मकान में गद्दियों के ऊपर जरा भी दूर न हुआ भीख मांग कर सुबह जब मैं भिक्षापात्र में लाता था तब जितना प्रसन्न और आनन्द मिलता, तुम्हारे घर बहुत स्वादी भोजन पाकर कुछ दुःखी न हुआ। और परमात्मा यहां भी था और परमात्मा वहां भी था। अब तो मैं जहां भी जाऊं वहीं वह है और ध्यान रहे कि तुम्हारे महल को मैं इन्कार भी कर सकता था। लेकिन परमात्मा के महल को कैसे इन्कार कर सकता था। तुम समझे कि तुम्हारे महल में ले जा रहे हो, हम समझे कि उसका निमंत्रण आया है तो जाना ही पड़ेगा। तुम्हारे घोड़े पर जो सवार हो गया था, तुम्हारे निमंत्रण की वजह से नहीं, तुमने ही कहा होता बात ही अलग थी पर वही कह रहा था उसने ही बुलाया था तो चले गए अब आज वही कह रहा है कि जाओ जवाब दो, दूर होकर बताओ कि फासला क्या है तो हम जाते हैं।

एक ऐसा धर्म चाहिए जो जीवन के बीच संन्यास को संभव बना दे। यह हो सकता है। इसमें कोई कठिनाई

नहीं ! मनुष्य के मन को, नई दिशा देने की बात है। कहीं कोई कठिनाई नहीं । लेकिन हजारों साल की गलत शिक्षा तोड़नी जरूरी हो गई है। अतीत ने जो हमें सिखाया है उसे छोड़ना पड़ेगा ताकि भविष्य में जो हम सीख सकें, उसका जन्म हो सकें। अतीत की धूल से मुक्त हो जाना जरूरी है ताकि भविष्य के सूरज हमें दिखाई पड़ सके। आदमी को इतने दुख में डालने का कारण है जीवन की वीणा से संगीत पैदा नहीं हो सका है। जीवन की वीणा से बहुत संगीत पैदा हो सकता है। लेकिन जीवन को स्वीकार करना पड़ेगा और जीवन को मानना पड़ेगा कि बहुत आनन्द छिपा है वहाँ। एक बार हमारे मन का यह भाव हो जाय कि जीवन में आनन्द छिपा है, तो जीवन से आनन्द का फूट पड़ना मुश्किल नहीं है । लेकिन हमने अगर ऐसा मान ही रखा हो कि जीवन में आनन्द के कोई झरने नहीं हैं तो फिर जीवन के झरने सूख जाते हैं। यह थोड़ी सी बातें मैंने कहीं। हो सकता है कोई बात ठीक लग जाये, जरूरी नहीं। हो सकता है कि कोई बात आपके मन के किसी कोने में छिपे हुए किसी तार को छू ले। हो सकता है कि आप जीवन की कला को खोजने में लग जायें, हो सकता है कि जीवन की वीणा को रखे ही बैठे न रहें और किसी दिन उससे कोई संगीत पैदा हो सके। प्रभु के मन्दिर में वही संगीत पहले प्रार्थना बनता है जब हम अपनी जीवन की वीणा को बजाते हैं, बाकी कोई संगीत उसकी प्रार्थना नहीं करता। जीवन की वीणा पर जो संगीत हम पैदा कर देते हैं वही प्रभु के मन्दिर की प्रार्थना बनता है। यह थोड़ी सी बातें इस आशा में कहीं कि शायद कुछ पता नहीं बीज पड़ जाता है भूमि में तो वर्षों बीत जाते हैं कभी वर्षा आती है बूंदें पड़ती हैं और बीज अंकुरित हो जाता है। कुछ बातें मैंने कहीं हो सकता है कहीं बीज पड़ जाय। किसी दिन प्रभु की वर्षा हो फूल अंकुरित हो जाय, आपकी जिन्दगी एक धार्मिक जिंदगी बन जाय। मेरी बातों को इतने प्रेम और शान्ति से सुना उससे बहुत अनुग्रहीत हूं और अंत में आप सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

●●●

मृत्यु की कला

प्रभु में होने में —
ऐसी तड़प होती ही है।
अज्ञात का विरह भी जलाता ही है।
वह भी तो प्रेम ही है।
लेकिन जो जलने को तैयार हैं, वे अवश्य ही उसे उपलब्ध हो जाते हैं।
दिये की ज्योति में आ गिरे पतंगे को देखा है न ?
ऐसे ही उसकी ज्योति भी बुलाती है।
लेकिन पतंगे जैसा साहस कितनों में है ?
साहस जुटाओं और कूंद पड़ो।
जो मिट सकता है, बस वही हो पाता है।
मृत्यु की कला ही जीवन की भी कला है।

करुणा और क्रांति

संकलन : श्री नरेन्द्र, गाडरवारा

● एक मित्र ने पूछा है कि शांति और क्रांति में क्या संबंध हो सकता है ? करुणा और क्रांति में क्या संबंध हो सकता है, और कैसे हो सकते हैं ? ये दोनों बातें तो विरोधी मालूम पड़ती हैं, ऐसा किसी दूसरे मित्र ने भी पूछा है।

रास्ते पर कभी चलती बैलगाड़ी देखी होगी आपने। गाड़ी का चाक चलता है लेकिन चाक के बीच में एक कील ठहरी रहती है और चलती नहीं है। क्या कभी यह दिखायी पड़ा कि ठहरी हुई कील के ऊपर ही चाक का चलना निर्भर होता है। दोनों में विरोध है कील ठहरी हुई है और चाक चलता है। मजे की बात यह है कि कील ठहरी हुई है इसलिए चाक चलता है। अगर कील भी चल जाय तो चाक न चल पाये। ठहरी हुई कील पर चलते हुए चाक का आधार है। जीवन बहुत विरोधों से निर्मित है। कभी जोर का बवण्डर देखा हो, तूफान देखा हो, धूल का आकाश में उड़ता हुआ गुब्बारा देखा हो और जमीन पर पड़े हुए उसके चिन्ह देखे हों तो एक बात देखकर हैरान होंगे कि सब तरफ तो गुब्बारे के चिन्ह बन जाते हैं लेकिन बीच में एक जगह खाली रह जाती है, वहां कोई तूफान नहीं होता। उठी हुई आंधी के घेरे के बीच में एक जगह होती है जहां सब शांत होता है, जहां कोई तूफान नहीं होता है।

शांति मनुष्य के भीतर चाहिए और क्रांति उसके बाहर के जीवन में चाहिए। शांति बनेगी कील और क्रांति होगी घूमता हुआ चाक और हम सोचते हैं कि इन दोनों में से एक को बचा लें। या तो हम सोचते हैं कि शांति ही बच जाय, कील ही बच जाय, चाक न रहे, तो कील व्यर्थ हो जायगी। क्योंकि कील की सार्थकता चाक के साथ ही है। भारत ने, पूरब के मुल्कों ने यह प्रयोग करके देख लिया है कि शांति ही बच जाय, क्रांति को कोई जरूरत नहीं है तो हम मुर्दा हो गये जमीन पर, मरे हुए लोग हो गये। हमारा अस्तित्व अनस्तित्व जैसा हो गया, न होने के बराबर हम हो गये और अच्छा था कि न हो जाते। हमारा होना न होने से भी दुखद हो गया। रुग्ण, बीमार, दीनहीन, दरिद्र दास। हमने जीवन की सारी पीड़ा झेल ली एक गलती के आधार पर कि हमने कहा, हम कील बचायेंगे, हम चाक नहीं बचायेंगे क्योंकि चाक कील का विरोधी है। हम केवल शांति बचायेंगे, क्रांति की, परिवर्तन की हमें कोई जरूरत नहीं। पश्चिम ने दूसरी भूल कर ली। उन्होंने चाक बचा लिया और कील फेंक दी। अब चाक को लिए बैठे हैं लेकिन बिना कील के चाक बेकार है। उन्होंने क्रांति बचा ली है, परिवर्तन बचा लिया है, शांति की फिक्र छोड़ दी है। उनका भी तर्क यही है कि अगर क्रांति करनी है तो शांति की क्या जरूरत है और ध्यान रहे, दिखायी पड़ता है कि पूरब और पश्चिम उल्टे हैं लेकिन दोनों का तर्क एक है। पूरब का तर्क यह है कि अगर शांति चाहिए तो क्रांति की क्या जरूरत है। पश्चिम का तर्क है कि अगर क्रांति चाहिए तो शांति की क्या जरूरत है। दोनों का तर्क भिन्न नहीं है। दोनों का तर्क एक है और वह इस बात पर निर्भर है कि जीवन में से हम एक चीज को चुनेंगे, विरोध को हम छोड़ देंगे। लेकिन जीवन विरोध से बना

है, जीवन की सारी व्यवस्था विरोध पर खड़ी है। कभी किसी मकान का दरवाजा देखें। दरवाजे में कारीगर ने विरोधी ईंटें लगा दी हैं। एक तरफ से ईंटें गयी हैं और दूसरी तरफ से ईंटें आयी हैं और दोनों ईंटों म विरोध है, दोनों के विरोध के ऊपर सारा भवन खड़ा हो गया है। हम कह सकते हैं कि ईंटें एक ही दिशा में लगा सकते थे, लेकिन फिर भवन खड़ा नहीं होता। दो विरोध के आधार पर बल पैदा होता है इसलिए जीवन सभी विरोधों के आधार पर खड़ा हुआ है। स्त्री और पुरुष एक तरह का विरोध है, ऋण और धन विद्युत एक तरह का विरोध है। निगेटिव और पोजीटिव पोल्स एक तरह का विरोध है। अगर हम जिन्दगी को खोजने जायेंगे तो सब तरफ विरोध मिलेंगे और विरोधों के आधार पर जीवन का भवन खड़ा होता हुआ मिलेगा। लेकिन पूरब ने भी इस बात को न समझा और पश्चिम ने भी न समझा। पूरब ने भी आधी संस्कृति बनायी, कहा कि हम सिर्फ जिन्दा रहेंगे, शांत होकर रहेंगे। पश्चिम ने कहा हम जिन्दा रहेंगे तो क्रांत होकर रहेंगे, शांति से क्या संबंध है। यह ऐसा ही है जैसे मैं कहूं मैं सांस सिर्फ भीतर ले जाऊंगा बाहर न ले जाऊंगा क्योंकि बाहर ले जाने और भीतर ले जाने में विरोध है। अब जब भीतर श्वांस ले जानी है तो बाहर श्वांस ले जाने की क्या जरूरत है। और जब भीतर ले जानी है तो भीतर ही ले जाइये और रोक रखिये भीतर, श्वांस को बाहर मत जाने दीजिये क्योंकि बाहर और भीतर में विरोध है लेकिन अगर भीतर ही सांस रोक लें तो मर जायेंगे। दूसरा आदमी कहता है कि जब बाहर ले जानी ही पड़ती है तो भीतर क्यों ले जायें, बाहर ही रोक दें। दोनों में विरोध है। हम बाहर ही रोक देते हैं। बाहर रोकने वाला भी मर जायेगा। एक भीतर रोककर मरेगा, एक बाहर रोककर मरेगा क्योंकि जिन्दगी बाहर भीतर आते हुए विरोधों पर निर्भर है। जिन्दगी निरंतर विरोध पर निर्भर है लेकिन हम विरोध को कभी स्वीकार नहीं कर पाते इसलिए बड़ी मुश्किल हो जाती है। हम कहते हैं जन्म तो हमें स्वीकार है, मृत्यु हमें स्वीकार नहीं है। यह बड़े पागलपन की बात है। जिन्दगी जन्म और मृत्यु के विरोध के आधार पर खड़ी हुई है। जिन्दगी जन्म और मृत्यु के विरोध पर ही निर्भर है। हम कहते हैं, जन्म तो बहुत सुखद है, मृत्यु बहुत दुखद है। जन्म स्वीकार करते हैं, मृत्यु हम नहीं चाहते, तो पागलपन की बात कर रहे हैं। जिस दिन हम जन्म और मृत्यु दोनों को एक साथ स्वीकार कर पायेंगे उस दिन जिन्दगी का रस कुछ और ही हो जायगा। शांति और क्रांति एक साथ स्वीकार करेंगे तो जिन्दगी कुछ बात और ही हो जायगी भीतर एक बिन्दु होगा जहां कोई परिवर्तन नहीं. और बाहर परिवर्तन का घूमता हुआ चाक होगा और भीतर एक कील होगी जहां कोई परिवर्तन नहीं। परमात्मा निरंतर वहां है जहां कोई परिवर्तन नहीं। संसार वहां है जहाँ निरंतर परिवर्तन है और वह जो परमात्मा है निरंतर शांत, चुप, मौन, जहां कभी कुछ नहीं बदलता उसके ऊार ही सारे संसार का चाक घूम रहा है।

संसार शब्द आपके ख्याल में है? संसार का अर्थ एक चाक होता है। ससार का अर्थ होता है जो घूम रहा है, दी व्हील। संसार शब्द का ही मतलब होता है घूमता हुआ, और परमात्मा का अर्थ होता है ठहरा हुआ लेकिन ये दोनों विरोधी नहीं। इस अर्थ में विरोधी नहीं हैं कि एक को हम बचा लेंगे। यह इस अर्थ में विरोधी हैं कि दूसरा एक पर निर्भर है। भीतर आती सांस बाहर जाती सांस पर निर्भर है। संसार न हो तो परमात्मा भी और परमात्मा न हो तो संसार भी न होगा और इस भूल में मत रहना कि परमात्मा एक क्षण भी संसार के बिना रह सकता है और इस भूल में भी मत पड़ना कि संसार एक क्षण भी परमात्मा के बिना रह सकता है। वे दोनों विरोधी ध्रुव हैं जो एक दूसरे को सम्हाले हुए हैं और इसलिए मुझे सब विरोध स्वीकार हैं और क्रांति और शांति के विरोध को मैं जिन्दगी को बदलने, परिवर्तन करने और जिन्दगी को उससे भी जोड़ने में उपयोगी मानता हूं जो सनातन है, शाश्वत है, जिसका कभी कोई परिवर्तन नहीं होता है। लेकिन मेरी बातों में इसलिए

कठिनाई हो जाती है कि कोई कहता है कि आप इधर क्रांति की बात कर रहे हैं, उधर आप शांति की बात करते हैं और मैं मानता ही ऐसा हूं कि वही आदमी क्रांति कर सकता है जो शांत है और जो आदमी शांत नहीं है, अगर क्रांति करेगा तो क्रांति के नाम पर सिर्फ पागलपन करेगा, और कुछ भी नहीं कर सकता है। सिर्फ शांत व्यक्ति क्रांति कर सकता है। सिर्फ शांत व्यक्ति क्रांति कर सकता है। शांत हाथों में ही क्रांति का हथियार दिया जा सकता है, अन्यथा क्रांति का हथियार खतरनाक सिद्ध हुआ है और खतरनाक सिद्ध होता रहेगा। इसलिए मैं कहता हूं, करुणा पहला सूत्र है, क्रांति उसके पीछे आनी चाहिए, करुणा पहले।

● एक दूसरे मित्र ने पूछा है कि आप कहते हैं कि जो है उसे समझ लेने से करुणा आ जायेगी। जो है, उसे समझ लेने से करुणा कैसे आ जायेगी?

अगर जो है उसे हम समझ लें तो करुणा के अतिरिक्त हमारे चित्त में और कुछ भी न रह जायगा क्योंकि जो है वह इतना दुखद हो गया है जो है इतना रुग्ण हो गया है, जो है हमारे चारों तरफ फैला हुआ वह इतना बीमार और विक्षिप्त हो गया है कि अगर हम उसे देख लें और समझ लें तो करुणा के सिवाय और कोई भाव न आयेगा, लेकिन हो सकता है, आप कहें क्रोध आ जाय। क्रोध तब आता है जब हम पूरी स्थिति से अपने को बाहर खड़ा कर लेते हैं। करुणा तब आती है जब पूरी स्थिति में हम भी सम्मिलित और एक हिस्सा होते हैं। अगर आज कोई आदमी चोरी कर रहा है तो हमें क्रोध आ सकता है कि इस चोर को मिटा डालें। लेकिन अगर हमें पूरी स्थिति—यह पता चल जाय और यह ख्याल आ जाय कि हम भी उसकी चोरी में हाथ बंटा रहे हैं, हम भी उसकी चोरी में साझीदार हैं, वह जो मजिस्ट्रेट अदालत में बैठकर चोरों का निर्णय कर रहा है वह भी चोरों की चोरी में साझीदार है। अगर हमें यह ख्याल आ जाय तो मजिस्ट्रेट को क्रोध नहीं आयेगा, करुणा आयेगी और चोर को सजा देते वक्त वह यह जानेगा कि मैं अपने को सजा दे रहा हूं और तब सजा देना बहुत मुश्किल हो जायेगा। परिवर्तन और क्रांति करना आसान हो जायेगा। चोरों को सजा हम कितने दिन से दे रहे हैं लेकिन एक चोर को हम कम नहीं कर पाये। जमीन पर चोर रोज बढ़ते हैं। जितनी सजा बढ़ी है उतने चोर बढ़ते गये हैं, जितने जेलखाने बढ़े हैं उतने चोर बढ़ते चले गये हैं। पृथ्वी पर अनादि से हम चोरों को सजा दे रहे हैं लेकिन एक चोर कम नहीं कर पाये और उसका कारण यह कि चोर को सजा देते वक्त हम अपने को बाहर रख लेते हैं। हम सोचते हैं कि हम तो चोर नहीं हैं, जो चोरी कर रहा है वह चोर है, उसको सजा दे रहे हैं। लेकिन हमारे गहरे हाथ हैं और इसलिए चोर को सजा मिल जाती है लेकिन चोरी बन्द नहीं होती क्योंकि हम, जिसका हाथ चोर को पैदा करने में था, तब तक दूसरे चोर पैदा कर लेते हैं। बल्कि हम जिस कारागृह में चोरों को बन्द करते हैं वह चोरों के लिए शिक्षा का प्रशिक्षण महाविद्यालय हो जाता है, और कुछ भी नहीं होता। वहां और पुराने, ज्यादा योग्य, ज्यादा कुशल चोरों का साथ हो जाता है और कुछ भी नहीं होता। वहां और अच्छी तरह चोरी करना सीखकर वापस लौट आते हैं। इसलिए एक दफा जो आदमी जेल चला गया है फिर वह नियमित रूप से जेल जाने लगता है, वह जेल वर्ड ही हो जाता है, उस पक्षी का घर ही वहीं हो जाता है। उसे यहां उतना अच्छा नहीं लगता है जितना वहां अच्छा लगने लगता है। वहां उसके संगी साथी मित्र सब इकट्ठे कर दिये हैं, वहां हमने चोरी के लिए सब को इकट्ठा कर दिया है पूरे प्रदेश के चोरों को कि तुम साथ सलाह मशविरा करो और एक दूसरे को तरकीबें बताओ कि कैसे पकड़ा न जा सके। और हम चारों तरफ चोर पैदा किये चले जा रहे हैं। सजा हम इसलिए दे भी नहीं रहे हैं कि चोर को मिटा देना है। क्योंकि चोर तो हम भी हैं। अगर चोर मिटेगा तो हम भी मिट जायेंगे। सजा हम इसलिए दे रहे हैं कि हम जो सजा देने वाले हैं, अपने मन में यह मजा ले सकें कि

हम चोर नहीं हैं, चोर कोई और है इसका हम आनंद ले रहे हैं। यह तो क्रोध है चोर के ऊपर। इससे कोई परिवर्तन नहीं होगा।

मैंने सुना है, इंगलैंड में सौ वर्ष पहले जो आदमी चोरी करता था उसे चौराहों पर खड़ा करके कोड़े मारे जाते थे ताकि और लोग देख लें और लोग सचेत हो जायें कि चोरी करने वाले की यह गति और यह दुर्गति होती है, लेकिन सौ वर्ष पहले फिर यह सजा बन्द कर देनी पड़ी, क्योंकि नतीजे बड़े उल्टे आये। लंदन में एक चौराहे पर कुल पांच छ को कोड़े मारे जा रहे थे। हजारों लोग देखने इकट्ठा हुए थे। आप यह मत सोचना कि वे यह देखने इकट्ठे हुए थे कि चोरों कि क्या गति होती है। वह असल में यह देखने इकट्ठे हुए थे कि जब कोड़े मारे जाते हैं तो चमड़ा कैसे उधड़ता है, खून कैसे बहता है। उनके दिल में भी कई दफा कोड़े मारने की इच्छा हुई होगी, वह अधूरी रह गयी। वह उसे देखकर पूरा कर लेना चाहते हैं। वह वहां से चोरी नहीं करनी चाहिए यह सीखकर नहीं लौटते हैं। वह वहां से कोड़ा मारने का कैसा रस और मजा है इसकी थ्रिल और इसकी पुलक लेकर वापस लौटते हैं लेकिन एक दिन तो और अद्‌भुत घटना घटी। उस दिन नगर में जब चार पांच चोरों को कोड़ों से पीटकर बेहोश कर दिया है और सड़क खून से भर गयी तो कोई दस हजार आदमी देखने इकट्ठे हुए थे। तभी पता चला कि कुछ लोगों की जेबें कट गयीं। भीड़ थी, लोग देख रहे थे चोरों को पिटते हुए। कुछ चोरों ने उनकी जेबें काट लीं तब यह पता चला कि जब चोर पिटे जा रहे हों, उनकी चमड़ी उधेड़ी जा रही हो तो उसी वक्त जेब कट सकती है तो इससे कोई चोरी नहीं रूक सकती। कोई सजा चोरी नहीं रोक पायी है क्योंकि सजा हमारी करुणा से नहीं है, सजा हमारे क्रोध से निकल रही है। क्रोध से कोई परिवर्तन कभी भी नहीं होता है और क्रोध से अगर परिवर्तन जबरदस्ती थोप भी दी जाय तो बहुत जल्दी विद्रोह शुरू हो जाता है, बगावत शुरू हो जाती है। और क्रोध को कितनी देर थोपा जा सकता है, आज नहीं कल क्रोध को शिथिल होना पड़ता है।

रूस में एक क्रांति हुई जो क्रोध से हुई, करुणा से नहीं। तीस, पैंतीस, चालीस वर्ष तक उन्होंने कोड़े के बल पर क्रांति को बचाने की कोशिश की, बंदूक के बल पर क्रांति को बचाने की कोशिश की। अंदाज किया जाता है कि कोई साठ लाख से एक करोड़ लोगों तक की रूस में हत्या की गयी क्रांति के बाद। क्रांति को बचाने के लिए यह हत्या करनी पड़ी। कोई हर्ज नहीं अगर क्रांति बच जाय तो समझ में आता है, लेकिन इतनी हत्या के बाद इतने लोगों को इतना कष्ट, इतनी पीड़ा देने के बाद अब वहां क्रांति शिथिल होने लगी क्योंकि इस तरह की जबरदस्ती से कोई क्रांति कितनी देर टिकाई जा सकती है। वापस रूस व्यक्तिगत पूंजी को बांटने की तरफ सोचने लगा। मकान व्यक्तिगत अब हो सकता है और कार भी अब व्यक्तिगत हो सकती है और ऐसा लगता है कि आने वाले पचास वर्षों में रूस और अमरीका में फर्क करना बहुत मुश्किल हो जायेगा कि कौन समाजवादी है और कौन पूंजीवादी। क्योंकि अमरीका में भी पूंजीवाद को जबरदस्ती थोपने की कोशिश मुश्किल हुई जा रही है। वे धीरे--धीरे न मालूम कितनी चीजों का राष्ट्रीय--करण करते चले जा रहे हैं। इधर रूस में जबरदस्ती समाजवाद थोपने की बात मुश्किल होती चली जा रही है। वे धीरे–धीरे पूंजीवाद को मौका दिये चले जा रहे हैं। पचास साल में वे एक जगह आ जायेंगे जहां दोनों के बीच फासला करना मुश्किल होगा। नाम के फासले रह जायेंगे, एक समाजवादी होगा, एक पूंजीवाद होगा लेकिन फासले नहीं रह जायेंगे।

जबरदस्ती किसी भी चीज को बहुत देर तक नहीं ठहराया जा सकता है और एक मजा है कि जिस चीज को हम जबरदस्ती ठहराते हैं, बहुत जल्दी पैंडुलम उलट जाता है। अगर आप किसी दुश्मन की छाती पर बैठ गये हैं जबरदस्ती और और पूरी ताकत से उसको दबा रहे हैं, अगर वह होशियार है और चुपचाप पड़ा रहे और ताकत न लगाये तो थोड़ी देर में आप थक जायेंगे क्योंकि आपको ताकत लगानी पड़ी है और वह ताकत को इकट्ठा कर लेगा, उतनी देर में। बहुत जल्दी वह मौका आयेगा कि

आप नीचे पड़े होंगे और वह आपकी छाती पर बैठा होगा। क्योंकि जो श्रम करता है वह थक जाता है और जो नीचे दबा होता है वह विश्राम कर लेता है इसलिए करवटें बदलते रहते हैं। क्रोध और प्रतिशोध से क्रांति नहीं होती। सिर्फ जो करवट बदलता रहता है, करवट बदलने से कोई मतलब नहीं है। क्रांति से मेरा मतलब है मनुष्य का हमने आज तक जैसा निर्माण किया है उसमें भूल हो गयी है। उस भूल की वजह से हम बहुत दुख और बहुत पीड़ा उठा रहे हैं। उस भूल के कारण पूरी मनुष्य जाति पागल होने के करीब पहुंच गयी है। उस भूल को समझकर, उस भूल को पहचानकर, उस भूल को देखकर स्वभावतः करुणा पैदा होगी क्योंकि वह भूल हमने ही मिल जुलकर की है। यह भाव हमने ही मारे, चाहे नींद में मारे हों चाहे बेहोशी में मारे हों। हमने अपने ही पैर अपने हाथ से काट लिये हैं और अपनी आंखें अपने हाथों से फोड़ ली है और अपने को सब तरह से अपंग कर लिया है। यह मनुष्य की जो अपंग स्थिति है, पैरालाइज्ड लकवा लगी हुई, सड़क पर घिसटती हुई, घावों से भरी हुई, यह हम ही जिम्मेवार हैं। अगर यह प्रतीति हो तो करुणा पैदा होती। करुणा का मतलब यह नहीं है कि किसी और पर करुणा पैदा होगा। करुणा का मतलब हम अपने पर करुणा कर पायेंगे। क्रोध असंभव हो जायगा और अगर ऐसी करुणा पैदा हो तो परिवर्तन अनिवार्य है। अगर हमें दिखायी पड़ जाय कि कुछ गलत हो गया है तो गलत को फिर खींचने का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। वह अपने आप गिर जायगा। करुणा से आने वाली क्रांति का अर्थ है कि हमें कुछ तोड़ने फोड़ने का उतना सवाल नहीं है जितना समझने का सवाल है। अगर समझ पूरी हो जाय तो शायद चीजें अपने आप छूट जायें, टूट जायें, अलग हो जायें। इतनी समझ विकसित करने की बात है और वह समझ विकसित हो सकती है अगर हम अपने दुखों के मूल कारणों की खोज करें तो समझ के विकसित होने में कोई बाधा नहीं है।

● एक मित्र ने पूछा है कि आप करुणा, अहिंसा, दया, प्रेम इन शब्दों में क्या फर्क करते हैं? ये तो सब एक ही अर्थ रखते हैं।

ये एक ही अर्थ नहीं रखते। इनमें बहुत बुनियादी फर्क है। असल में सही अर्थों में दो समानार्थक शब्द होते ही नहीं हैं कितने ही समानार्थक मालूम पड़ते हों उनमें कुछ बुनियादी फर्क होता है इसलिए दो शब्द ईजाद करने पड़ते हैं। अब जैसे प्रेम और अहिंसा और करुणा और दया, इन्हें थोड़ा समझ लेना उपयोगी है क्योंकि हम इन शब्दों से बहुत ज्यादा भरे हुए हैं। अहिंसा का मतलब है दूसरे को दुख न पहुंचाना। वह बिल्कुल निगेटिव है। एक आदमी किसी को प्रेम बिना किये हुए भी अहिंसक हो सकता है क्योंकि किसी को दुख न पहुंचाना इतना ही अहिंसा शब्द का अर्थ है, किसी की हिंसा न करना, किसी को दुख न पहुंचाना। लेकिन प्रेम पोजीटिव है, प्रेम का मतलब है किसी को सुख पहुंचाना। प्रेम का मतलब यह नहीं है कि किसी को दुख न पहुंचाना। प्रेम का मतलब है किसी को सुख पहुंचाना। तो प्रेम तो आयेगा किसी को सुख पहुंचा कर और अहिंसक सिकुड़ जायगा कि किसी को दुख न पहुंचे, काफी है। अगर आपके रास्ते पर कांटे बिछे हैं तो प्रेम उन्हें आकर उठायेगा। अहिंसक आपके रास्ते पर नहीं बिछायेगा बस इतना ही। लेकिन आपके रास्ते पर पड़े कांटे को उठाने नहीं आयेगा अहिंसक, क्योंकि अहिंसक को आपको दुख नहीं पहुंचाना, इतना ही ध्यान रखना पर्याप्त है। शर्त ही इतनी है कि आपको दुख नहीं पहुंचाना है और यह भी, आपको दुख क्यों नहीं पहुंचाना है, क्या इसलिए कि आपसे प्रेम है? नहीं, यह दुख इसलिए नहीं पहुंचाना है कि आपको दुख पहुंचाने से मेरे नर्क जाने की संभावना है। आपको दुख पहुंचायेंगे तो मेरे नर्क में सड़ने का उपाय हो जायगा और अगर आपको दुख न पहुंचाया तो मेरी मोक्ष की सीढ़ी बन जायगी। आपसे कोई प्रयोजन नहीं है अहिंसक को। अहिंसक को प्रयोजन है अपने से। वह इस फिक्र में लगा है कि मैं मोक्ष कैसे जाऊं, नर्क से कैसे बचूं इसलिए किसी को दुख नहीं पहुंचाना है। दुख पहुंचाने से कहीं नर्क न हो जाय। लेकिन प्रेम का मतलब बहुत भिन्न है। प्रेम का मतलब यह है कि किसी को सुख पहुंचाना। और किसी को सुख पहुंचाने में ही हमारा सुख है और तब प्रेम आपको स्वर्ग पहुंचाने के लिए नर्क जाने के लिए भी तैयार हो सकता

है लेकिन अहिंसक आपको सुख पहुंचाने के लिए नर्क जाने को तैयार नहीं हो सकता है। अहिंसक आपको दुख नहीं पहुंचाता ताकि उसके स्वर्ग जाने की तैयारी पूरी हो सके अहिंसा निषेध है, निगेटिव है, प्रेम पाजीटिव है, विधायक है। लेकिन प्रेम और करुणा में भी बहुत फर्क है। प्रेम का अर्थ है कि हम किसी को सुख पहुंचाना चाहते हैं और किसी के सुख में भागीदार होना चाहते हैं करुणा का अर्थ है कि हम सबके दुख में भागीदार हैं और सबका दुख हमें दिखायी पड़ गया है और चित्त करुणा से भर गया है। फर्क समझ लेना। प्रेम का अर्थ है सबके सुख में भागीदार होना चाहते हैं। करुणा का अर्थ है सबके जीवन में जो दुख है उसमें हम हिस्सेदार हैं इसकी प्रतीति। इसका बोध, इसकी सफरिंग, इसकी पीड़ा। तो प्रेम में तो एक आनन्द है : करुणा में एक पीड़ा है। प्रेम में एक रस है, करुणा में एक घाव है। करुणा एक फोड़ा की तरह दुखता हुआ घाव है, प्रेम एक फूल है। करुणा एक कांटा की तरह चुभन है इसलिए प्रेम और करुणा समानार्थी नहीं हैं।

करुणा और दया तो बहुत ही भिन्न बातें हैं। करुणा का अर्थ है सबके दुख की प्रतीति और उस दुख में मैं भी जिम्मेदार हूं इसकी प्रतीति। दया में ? दया में दूसरे के दुख की प्रतीति है लेकिन दूसरे अपने दुख के लिए जिम्मेदार है इसकी भी प्रतीति है और मैं इसके दुख को दूर करने का थोड़ा बहुत उपाय कर रहा हूं। इसके अहंकार का भी बोध है इसलिए दया करने वाला ऊपर खड़ा होता है। दया करने वाला दान दे रहा है, दया करने वाला बहुत सूक्ष्म अपमान कर रहा है जिसके साथ दया कर रहा है। दया शब्द बहुत बेहूदा और कुरूप है, बहुत कुरूप है, बहुत अच्छा नहीं है इसलिए भूलकर भी आप दया मत करना क्योंकि जिस पर भी आप दया करेंगे उसका अपमान करेंगे ही। प्रेम करना और दया में बड़ा फर्क है। जब प्रेम किसी को देता है तो ऐसा अनुभव नहीं करता है कि मैंने दिया। प्रेम सदा ऐसा ही अनुभव करता है कि जितना देना चाहिए था उतना नहीं दे पाया। एक मां से पूछें कि तूने अपने बेटे के लिए कितना किया, वह आंख से आंसू बहाने लगेगी और कहेगी कि मैं कुछ भी नहीं कर पायी। जो कपड़े मुझे देने थे वह नहीं दे पायी, जो खाने मुझे खिलाने थे वह नहीं खिला पायी, जो शिक्षा मुझे देनी थी वह मैं नहीं दे पायी। मां एक पूरी की पूरी फिहरिस्त बता देगी जो वह नहीं कर पायी। लेकिन जायें एक धर्मादा कमेटी के सेक्रेटरी से पूछें कि आपने गरीबों के लिए क्या क्या किया तो वह पूरी फिहरिस्त बता देगा कि हमने यह किया, हमने यह किया। जो उन्होंने नहीं किया वह भी उसमें जोड़ देंगे कि हमने यह किया। दया करने वाला कहता है हमने यह किया। वह अहंकार की तृप्ति कर रहा है। प्रेम करने वाला कहता है हम यह नहीं कर पाये, करना था। उसका अहंकार टूट गया है। प्रेम अहंकार तोड़ जाता है, दया अहंकार मजबूत कर जाती है। यह सब शब्द बड़े अलग अलग हैं। ये समानार्थी नहीं हैं। इनके पीछे गहरे भेद हैं। दया से कोई क्रांति नहीं होती इसलिए हिन्दुस्तान में दया पांच हजार साल से चल रही है लेकिन क्रांति नहीं हुई है। दया पुरानी है। हम बड़े दयावान लोग हैं और जैसे कि दयावान लोग खतरनाक होते हैं, हम खतरनाक हैं। हम पांच हजार साल से दया कर रहे, दान कर रहे हैं। हम कह रहे हैं गरीब पर दया करो, बीमार पर दया करो। क्यों ? क्योंकि गरीब पर दया करने से आपके स्वर्ग की सीढ़ी उपलब्ध होगी।

करपात्री जी ने एक किताब लिखी है। बहुत अद्भुत किताब है। उसे खूब सबको पढ़ लेना चाहिए। उस किताब में उन्होंने समाजवाद का विरोध किया है और कहा है, समाजवाद के विरोध के कई कारण हैं। उसमें एक कारण यह है कि समाजवाद में कोई गरीब नहीं रह जायगा कोई अमीर न रह जायगा तो फिर दया कौन करेगा, दान कौन लेगा, दान कौन लेगा ? और बिना दान के मोक्ष असंभव है इसलिए समाजवाद में फिर मोक्ष संभव न रह जायगा अगर मोक्ष चाहिए तो समाजवाद मत आने देना। अगर मोक्ष चाहिए तो गरीब को गरीब बनाकर रखना और सड़क पर भिखमंगे को

खड़ा रखना क्योंकि उसी के कंधे पर दया करके आप मोक्ष जा सकेंगे और तो कोई रास्ता नहीं।

ये दया करने वाले लोग हैं, इनमें करुणा है? इनकी बात सुनकर तो ऐसा लगता है कि करुणा का इनमें कहीं कोई पता नहीं। वे यह कह रहे हैं कि गरीब को रखना पड़ेगा नहीं तो दान कौन लेगा। आज रूस में कोई दान नहीं लेगा। अगर आप किसी को दान देने जायें तो हो सकता है पुलिस में पकड़कर रिपोर्ट लिखवा दे कि वह आदमी हमको दान देने की कोशिश कर रहा है। हमारा अपमान करना चाहता है। आज काई भीख मांगने हाथ तो नहीं फैलायेगा आपके सामने। आज रूस में दानी होने का कोई उपाय नहीं। तो करपात्री जी ठीक कहते हैं। शास्त्रों में यही लिखा है कि बिना दान के मोक्ष नहीं क्योंकि दान सबसे बड़ा धर्म है। तो रूस में सबसे बड़े धर्म की तो जड़ कट गयी। तो वह ठीक कह रहे हैं। शास्त्र के हिसाब से बिल्कुल ठीक कह रहे हैं कि अगर मोक्ष को बचाना है तो गरीब को बचाओ, भिखमंगे बीमार को बचाओ।

बीमार रहेगा तब तो अस्पताल बना पाओगे और जब गरीब रहेगा तभी तो धर्मशाला काम आयेगी। और जब भिखमंगे भीख मांगेंगे तब दया करने वाले लोगों को मजा आयेगा नहीं तो सब मुश्किल हो जायेगा। दया करने वाले में करुणा नहीं है, दया करने वाले में बहुत गहरी कठोरता और क्रूरता है। वह दया में भी रस ले रहा है। वह जब दो पैसे आपको दे रहा है तो हजार रुपये का अहंकार वापस ले रहा है। वह दो पैसे इसलिए चिल्ला कर देता है, अखबार में खबर कर देता है, पत्थरों पर खोद कर देता है। धर्मशालाओं पर पत्थर लगा देता है कि मैंने दिये। उसे रस इसमें नहीं है कि कोई पीड़ित था, उसे इसमें है कि उसने किसी की पीड़ा दूर करने का बड़ा भारी काम किया है। दया क्रांति नहीं लाती इसलिए भारत में क्रांति नहीं आ सकी। दया बिल्कुल क्रांति को रोकती है क्योंकि दया भिखमंगे को दो पैसे दे देती है लेकिन भिखमंगे क्यों पैदा होते हैं इसकी तलाश में नहीं जाती। और भिखमंगे को दो पैसे मिल जाते हैं तो भिखमंगा भी राहत अनुभव करता है। वह भी उस सीमा पर नहीं पहुंच पाता कि दान देने वाले की गर्दन पकड़ ले और कहे कि दान नहीं लेंगे और कहे कि पहले हमारी जेब काटते हो और फिर हमको दान देते हो। वह कहेगा कि पहले हमें भिखमंगा बना देते हो और फिर दान देने आते हो। वह कहेगा कि पहले तो हमें चूस लेते हो और फिर हमारे लिए अस्पताल बनाते हो, जिनमें खून का दान चल रहा रहा है, यह जाल कैसा है? नहीं, दया यह भी नहीं होने देगी। दया कांसुलेशन बन जाती है और गरीब को लगता है कि अमीर कितना दयावान है। अमीर को बचाने में दया ने जितना काम किया है उतना और किसी चीज ने काम नहीं किया। अमीर को बचाने में धर्मशालाओं ने जितनी आड़ की है और मंदिरों ने, उतनी और किसी चीज ने नहीं की है, क्योंकि ऐसा लगता है कि कितना दयावान है अमीर, लेकिन यह नहीं दिखायी पड़ता है कि धन इकट्ठा करना क्रूरता है। एक लाख एक आदमी क्रूरता से इकट्ठा करता है, दस हजार रुपये दान करता है, फिर वह महान दानी हो जाता है। फिर हम उसको नमस्कार करते हैं कि वह परम दानी है। लेकिन कोई नहीं पूछता कि दान में जो धन दिया गया वह आया कहां से, वह आया कैसे।

नहीं, दया से क्रांति नहीं हो सकती, अहिंसा से भी क्रांति नहीं हो सकती क्योंकि अहिंसा निगेटिव है। अहिंसा से क्रांति इसलिए नहीं हो सकती कि अहिंसा इतनी कहती है कि दूसरे को दुख मत दो। तो कुछ लोग अहिंसक हो जाते हैं, वह दूसरे को दुख नहीं देते। लेकिन दूसरे के दुख को दूर करने के लिए वे कोई उपाय भी नहीं करते, दूसरे के सुख की कोई व्यवस्था भी नहीं करते। वे केवल हाथ अलग करके रास्ते से किनारे हट जाते हैं कि हम इस रास्ते पर न चलेंगे जहां दूसरे को दुख दिया जाता है। बस इतना ही वे करते हैं। वे नकारात्मक लोग हैं, जैसे कोई आदमी कहे कि दूसरे को बीमार मत करो। ठीक है, हम किसी को बीमार नहीं करेंगे लेकिन दूसरे लोग बीमार हैं उनके लिए भी हम कुछ नहीं करेंगे क्योंकि हमें उनसे

कोई संबंध नहीं है। हमने उनको बीमार नहीं किया है। किसी की आंख मत फोड़ो, यह ठीक है लेकिन किन्हीं की आंखें फूटी हुई हैं, अंधा है, उनकी आंखों को ठीक करने का उपाय अहिंसा से नहीं चलता। अहिंसा की वृत्ति नकारात्मक है। हिन्दुस्तान में अहिंसा भी चल रही है कोई साढ़े तीन हजार साल से, लेकिन उससे भी कोई हल नहीं हुआ क्योंकि उसने कुछ लोगों को सिकोड़ दिया बुरी तरह। उन्होंने सब तरफ से हाथ खींच लिए। वे पैर फूंक-फूंक कर रखने लगे कि कोई कीड़ा जमीन पर न मर जाय। वे मुंह पर पट्टियां बांधने लगे कि कहीं नाक की गरम हवा से कोई कीड़ा न मर जाय। वे रात करवट नहीं बदलते हैं कि कहीं कीड़ा न मर जाय। वे पानी छान के पीते हैं कि कहीं कोई कीड़ा न मर जाय, वे हरी सब्जी नहीं खाते हैं कि कहीं कोई कीड़ा न मर जाय। वे रात खाना नहीं खाते कहीं कोई कीड़ा न मर जाय। उन्होंने सब तरफ से अपने को रोक लिया कि हिंसा न हो जाय। लेकिन जो चल रहा है दुख, हिंसा उसे बदलने को वह कहीं भी नहीं जाते। और उनमें उन्हें डर लगता है कि बदलने आये तो हिंसा न हो जाय। एक आदमी को घाव है और उसके घाव में कीड़े पड़ गये हैं। अहिंसक आदमी उनके घाव पर मलहम नहीं बांध सकता क्योंकि मलहम बांधने से कीड़े मर जायेंगे। वह अहिंसक आदमी कहेगा कि हमने तो घाव नहीं किया, आप जानें आपका काम जाने। हम कीड़े मारने की झंझट नहीं लेते। कलकत्ते में मारवाड़ी जैन खाटों में खटमल पड़ जाय तो उनको मारते नहीं रहे हैं। अहिंसक लोग हैं। लेकिन अगर खाट में कोई न सोये तो वे मर ही जायेंगे। तो एक रुपया दो रुपया देकर रात में आदमी किराये पर रख लेते हैं और उस खाट पर सुला देते हैं कि तुम इस पर सो जाओ। खटमल न मर पायें और तुमने अपना काम कर लिया, हमने दो रुपया दे दिया। तुमसे मुफ्त काम भी नहीं लिया। अहिंसा उसकी पूरी हो गयी। खटमल भी नहीं मरे और उनको खून भी पिलवा दिया, खून के पैसे भी चुका दिये। लीगल रास्ता खोज लिया, कोई झंझट नहीं रही उसमें।

अहिंसक आदमी जीवन के दुख को नहीं मिटाने आयेगा। उसकी सिर्फ चेष्टा इतनी है कि मैं दुख न दूं। लेकिन इतनी चेष्टा अधूरी है। इससे कुछ हो नहीं सकता। प्रेम करने वाले भी सदा से रहे हैं। प्रेम सदा से है, प्रेम निरंतर रहा है। प्रेम सुख देना चाहता है, दूसरे को सुख देना चाहता है। अहिंसा में बहुत ऊपर है प्रेम। दूसरे को सुख देने की खोज करता है। लेकिन दूसरे को सुख देने की खोज काफी नहीं है जबतक कि दूसरे के दुख के बुनियादी कारणों में भी हमारा हाथ है इसका हमें पता न चल जाय। एक पति अपनी पत्नी को सुख देना चाहता है। वह प्रेम करता है उसे, लेकिन उसका पति होना भी उसकी पत्नी के दुख का एक हिस्सा है यह उसे कभी दिखायी नहीं पड़ने वाला है। एक पति अपनी पत्नी को सुख देना चाहता है सब तरह का। वह उसे प्रेम करता है। वह उसे साड़ियां ला रहा है, गहने खरीद रहा है, मकान बना रहा है, बड़ी कारें खरीद रहा है, वह अपनी जिन्दगी लगाये दे रहा है उसको सुख देने के लिए। पत्नी सुख नहीं पा रही है। वह पूरी कोशिश कर रहा है लेकिन उस पति को अगर करुणा हो, प्रेम की जग और वह देख सके कि पत्नी का दुख क्या है तो शायद उसका पति होना भी पत्नी के दुखों में एक कारण है। जब भी कोई किसी का मालिक बन जाता है तो दुख देने वाला हो जाता है। मालिक सदा ही दुख देता है और जब कोई किसी को बांध लेता है तो दुख देने वाला हो जाता है और जब कोई किसी की परतंत्रता बन जाता है तो दुख देने वाला हो जाता है और जब कोई किसी को पजेस कर लेता है और मालकियत कर लेता है तब दुख देने वाला हो जाता है, यह उसे पता नहीं है। एक फूल को मैं प्रेम करता हूं, इतना प्रेम करता हूं कि मुझे डर लगता है कि कहीं सूरज की रोशनी में कुम्हला न जाय और मुझे डर लगता है कि कहीं जोर की हवा आये, इसकी पंखुड़ियां न गिर जायें और मुझे डर लगता है कि कोई जानवर आकर इसे चर न जाय और मुझे डर लगता है कि पड़ोसी के बच्चे इसको उखाड़ न लें तो मैं फूल के पौधे को मय गमले के तिजोरी में बन्द करके ताला लगा देता हूं। प्रेम तो मेरा बहुत है लेकिन करुणा मेरे पास बिल्कुल नहीं है। मैंने पौधे को बचाने के सब उपाय किये, धूप से बचा

लिया, हवा से, जानवरों से। मजबूत तिजोरी खरीदी, उसको भी मेहनत करके बनाया, ताला लगाकर पौधे को बन्द कर दिया। लेकिन अब यह पौधा मर जायेगा। मेरा प्रेम इसे बचा नहीं सकेगा और जल्दी मर जायेगा। हो सकता था, बाहर हवाएं थोड़ी देर लगतीं और पड़ोसी के बच्चे हो सकता था, इतनी जल्दी न भी आते और सूरज की किरणें फूल को इतनी जल्दी न मुर्झा देतीं लेकिन तिजोरी में बन्द पौधा जल्दी ही मर जायेगा। प्रेम तो पूरा था लेकिन करुणा जरा भी न थी। जगत में प्रेम भी रहा है, अहिंसा भी रही है, दया भी रही है लेकिन करुणा नहीं। करुणा का अनुभव ही नहीं रहा है और करुणा का अनुभव आये तो हम जीवन को बदलेंगे और करुणा से अगर दया निकले तो वह दया न रह जायेगी। उसमें कोई अहंकार की तृप्ति न होगी और करुणा से अगर अहिंसा निकले तो वह निषेधात्मक न रह जायेगी, वह सिर्फ इतना न कहेगी कि दुख मत दो। वह इतना भी कहेगी दुख मिटाओ भी, दुख बचाओ भी, दुख से मुक्ति भी करो। सुख भी लाओ और अगर करुणा से प्रेम निकले तो प्रेम मुक्तिदायी हो जायगा, बंधनकारी नहीं रह जायगा। अब तक का सारा प्रेम गुलामी लाने वाला सिद्ध हुआ है। सब प्रेम ने जंजीरें बाँध दी हैं। हां, गरीब आदमी लोहे की जंजीर बांधता है, अमीर आदमी सोने की जंजीर। अगर करुणा से प्रेम निकलेगा तो वह मुक्ति लायेगा। मैं जिसे प्रेम करता हूं उसे मुक्त करूंगा। अगर मेरी करुणा भी उसके साथ है। मैं जिससे प्रेम करता हूं उसके जीवन के संकटों को, कष्टों को, पीड़ाओं को, भीतर की स्थितियों को समझूंगा, सहयोगी बनूंगा। मैं जिसे प्रेम करता हूं अगर वह किसी और को प्रेम करके सुखी होता हो तो मैं सुखी होऊंगा क्योंकि जिससे मैं प्रेम करता हूं उसे मैं सुखी देखना चाहता हूं। लेकिन जिसे हम प्रेम कहते हैं वह बरदाश्त नहीं कर सकेगा। मैं जिसे प्रेम करता हूं अगर वह किसी की तरफ प्रेम की नजरों से देख ले तो मैं उसकी गर्दन पकड़ लूं और मैं कहूंगा कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं। तुमने दूसरे की तरफ प्रेम की नजर से कैसे देखा। यह करुणा नहीं है, यह अत्यंत कठोरता है और प्रेम के नाम पर गहरी हिंसा है इसलिए प्रेमी एक दूसरे के साथ जितने हिंसक हो जाते हैं उसका हिसाब लगाना मुश्किल है और जब प्रेमी हिंसक होते हैं तो उन जैसा हिंसक और कोई भी नहीं हो सकता है और जब वे एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या से भर जाते हैं तब वे जितना कष्ट जगत में पैदा करते हैं उतना कोई भी नहीं करता। नहीं, करुणा से अगर प्रेम निकले तो प्रेम मुक्तिदायी होगा और करुणा से दया निकले तो निरहंकार होगी और करुणा से अहिंसा निकले तो विधायक होगी। इसलिए मैंने करुणा पर जोर दिया है। वह सिर्फ शब्दों का ही फासला नहीं है, भीतर कोई दृष्टि है। इसलिए मैंने कहा, करुणा की छाया है क्रांति। अहिंसा की नहीं, तथा कथित प्रेम की नहीं, तथा कथित दया की नहीं।

● एक मित्र ने पूछा है कि मैं निरंतर कहता हूं कि हम सब परमात्मा में, प्रभु में, सत्य में एक हो जायें। कहां है वह सत्य, कहां है वह प्रभु, कहां है वह परमात्मा, कैसा है वह ?

किसको कहते हैं परमात्मा, इसे भी थोड़ा समझ लेना उचित है क्योंकि मनुष्य के जीवन में जो क्रांति लानी है उसमें अगर प्रभु की मौजूदगी न रही तो वह क्रांति बहुत गहरी न हो सकेगी। अगर उस क्रांति को गहरी करनी है और जड़ मूल तक ले जानी है तो उसमें प्रभु का हाथ और मौजूदगी बहुत जरूरी है। प्रभु विहीन क्रांतियां हो गयी हैं, असल में जिन्हें मैं कह रहा हूं क्रोध से निकली हुई क्रांतियां, वे प्रभु विहीन क्रांतियां हैं और जिसे मैं कह रहा हूं करुणा से आने वाली क्रांति वह प्रभु की मौजूदगी को स्वीकार करके आने वाली क्रांति है। ऐसी क्रांतियां हो गयी हैं जिनमें ईश्वर को हमने स्वीकार नहीं किया है बल्कि क्रांतिकारी अक्सर ईश्वर को इन्कार करता रहा है। उसे ऐसा लगता रहा है कि ईश्वर भी क्रांति में बाधा है। उसने ईश्वर को भी तोड़ देना चाहा है। वह ईश्वर पर भी क्रोधित हो गया है। उसे लगा है कि इतनी गरीबी है दुनिया में, तो कहां है ईश्वर, कैसा है ईश्वर ? इतनी पीड़ा है तो ईश्वर नहीं हो सकता है। उसने ईश्वर को भी पोंछ देना चाहा है।

लेकिन पीड़ा और गरीबी और तकलीफ ईश्वर के कारण नहीं है, हमारे कारण है और ईश्वर की अनुकंपा इतनी है कि वह हमें सब तरह से स्वीकार किये हुए है। वह हमें भटकने के लिए भी और पाप करने के लिए भी स्वीकार किये हुए है। और स्वतंत्रता का कोई मतलब नहीं होता है। अगर ईश्वर हम सबको जन्म लेने के पहले ही चिट्ठी लिखकर दे दे और कहे कि आपको अच्छे काम करने की पूर्ण स्वतंत्रता है लेकिन बुरा काम करने की बिल्कुल स्वतंत्रता नहीं हैं और वह हमसे कह दे कि आपको प्रेम की पूरी स्वतंत्रता है, जितना चाहो प्रेम करो लेकिन घृणा करने की बिल्कुल स्वतंत्रता नहीं है, तो क्या वह स्वतंत्रता स्वतंत्रतता होगी ? अगर हमसे कहा जाय कि आपको संत बनने की पूरी स्वतंत्रता है, बनो। असाधु बनने की स्वतंत्रता नहीं है तो संत बनने की स्वतंत्रता भी समाप्त हो जायगी। क्योंकि संत बनने की स्वतंत्रता असंत बनने की स्वतंत्रता से ही जुड़ी हो सकती है अन्यथा नहीं हो सकती। अगर हमसे कहा जाय कि आपको जागने की पूरी स्वतंत्रता है लेकिन सोने की नहीं तो जागने की स्वतंत्रता फौरन खो जायेगी क्योंकि जागने की स्वतंत्रता सोने की स्वतंत्रता के साथ ही जुड़ी है। अलग अलग नहीं हो सकती। आदमी को शुभ करने की स्वतंत्रता इसीलिए उपलब्ध है कि उसे अशुभ करने की भी स्वतंत्रता उपलब्ध है। और परमात्मा ने आदमी को इतना स्वतंत्र कर दिया है कि उसने अपने को सबके सामने मौजूद भी नहीं रखा है। यह भी परमात्मा की स्वतंत्रता का उपक्रम है। हम सब पूछते है ईश्वर सामने क्यों नहीं है ? अगर ईश्वर सामने हो तो हमारी स्वतंत्रता में पूरी बाधा पड़ेगी। आप एक घर में चोरी करने गये और परमात्मा आपके साथ ही लगा हुआ है। वह आपके बगल में ही खड़ा हुआ है। ऐसे तो वह खड़ा ही हुआ है। लेकिन जिनको वह दिखायी पड़ जाता है कि खड़ा हुआ है उसकी चोरी मुश्किल हो जाती है लेकिन हमको दिखायी नहीं पड़ता है इसलिए स्वतंत्रता है हम चोरी कर सकते हैं, और सोच सकते हैं कि कोई दिक्कत नहीं सबको धोखा दे दिया है।

मैंने सुना है, एक फकीर के पास कुछ युवक आये। उन्होने कहा कि हम अज्ञात की खोज करना चाहते हैं। वह कहां है ? जैसा कि इस मित्र ने पूछा है कि कहां है वह ईश्वर, कैसा है वह प्रभु ? उन्होंने भी पूछा। उस फकीर ने कहा, एक छोटा सा काम कर लाओ, फिर मैं तुम्हें बताऊंगा। चार शिष्य थे, उन्होंने एक एक कबूतर उनको दे दिया और कहा, यह ले जाओ और जहां कोई न देखता हो जल्दी से कबूतरों को मार कर वापस लौट आओ। एक शिष्य बाहर सड़क पर गया। दोनों तरफ देखा भरी दोपहरी थी, कोई भी नहीं था लेकिन लोग घरो मे सोये पड़े थे। उसने कबूतर को मरोड़ा और भीतर वापस आ गया और कहा यह लीजिये। कोई भी नहीं देख रहा था। दूसरा शिष्य सड़क पर गया। उसने सोचा कि सड़क पर कोई नहीं है लेकिन भरी रोशनी है, दोपहरी है। मैं मारूं और कोई आये या खिड़की से झांक ले। तो वह अंधेरी गली में गया जहां कोई द्वार न थे, बड़ी दीवालें थीं। गांव के किले की मजबूत दीवाल थी पत्थरों की। वह उसकी आड़ में गया। जब वह सब तरह निश्चिन्त हो गया कि अब दूर मीलों तक कोई दिखायी नहीं पड़ता है तब उसने गर्दन मरोड़ी और वापस आकर गुरू को दे दिया। तीसरे शिष्य ने सोचा, दिन में कोई न कोई देख ही सकता है। प्रकाश देखने का माध्यम है। वह रात तक रुका। अपने घर के अंधेरे में भीतर द्वार बन्द करके उसने गर्दन मरोड़ी और लाकर गुरू को दे दिया लेकिन चौथा शिष्य, महीने भर हो गया, कोई पता न चला। गुरू बहुत चिन्तित थे। अपने शिष्यों को कहते हैं खोजो, कहां गया। महीने भर के बाद उसे एक जंगल में पकड़ा गया। वह करीब करीब पागल हालत में था। गुरू के सामने लाया गया। गुरू ने पूछा, वह कबूतर कहां है ? वह हाथ में लिये था। उसने कहा, बहुत मुश्किल में डाल दिया। मैं अंधेरी से अंधेरी जगह में गया लेकिन कबूतर की गर्दन पर जब हाथ रखा तो मैंने देखा कबूतर देख रहा है। तब मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया। फिर मैंने बहुत तरकीबें खोजीं, कबूतर की आंख पर पर पट्टी बांध दी और एक घनघोर अंधेरे कटहरे में गया जहां कि पट्टी के भीतर से देखना क्या

पट्टी के बाहर से भी कबूतर को देखना संभव नहीं होता। वहां जाकर जने मैंने उसकी गर्दन मरोड़ी तब मुझे दिखायी पड़ा कि मैं देख रहा हूं। और गहरे गड्ढे में गया जहां हाथ को हाथ न सूझता था और जब मैं उसे दबाने लगा तब मुझे अचानक प्रतीत हुआ कि परमात्मा देख रहा है मुझे मुश्किल में डाल दिया है। यह काम नहीं हो सकता। कबूतर आप वापस ले लें। मैं बिल्कुल पागल हो गया हूं। मैं वह जगह खोज रहा हूं जहां परमात्मा न हो, सब जगह घूम आया, जंगल, पहाड़, सब देख डाले, वह सब जगह है।

उस फकीर ने उन तीन को जो कबूतर को मार लाये थे कहा कि तुम भाग जाओ। तुम अदृश्य को नहीं खोज सकोगे। तुम्हारी आंखें बड़ी स्थूल हैं तुम सूक्ष्म को न देख सकोगे। आंखों को थोड़ा सूक्ष्म करके आओ। यह युवक कुछ काम कर सकता है। इसकी आंखें सूक्ष्म हैं। यह किसी उपस्थिति को अनुभव कर रहा है। कबूतर की भी उपस्थिति अनुभव करता है, अपनी भी और सब तरफ से रोक लेता है तो भी इसे किसी की उपस्थिति मालूम पड़ती है। परमात्मा अद्भुत है कि उसने हटा लिया है अपने से हमको, हमसे दूर अलग, अदृश्य ताकि हम पूरी तरह स्वतंत्र हो सकें अन्यथा हम स्वतंत्र न हो पाते। बेटा बाप के सामने सिगरेट नहीं पीता है, बगल के कमरे में जाकर पी लेता है। लेकिन अगर पता चल जाय कि यहां परमात्मा मौजूद है तो किस कमरे में जाये, कहां छिपे, फिर बहुत मुश्किल हो जाय और अगर निरंतर यह मालूम होने लगे कि दो आंखें सदा झांक रही हैं, हर जगह, हर कोने में तब बहुत मुश्किल हो जायगा। स्वतंत्रता असंभव हो जाय।

मनुष्य पूरी तरह स्वतंत्र हो सके इसलिये परमात्मा अदृश्य हो गया है। परमात्मा का अदृश्य होना मनुष्य को दी गयी पूरी स्वतंत्रता के आधारभूत कारणों में से है। लेकिन क्या मतलब है परमात्मा से ? कोई व्यक्ति, कोई पर्सनलिटी कहीं कोई छिपा हुआ बैठा है। नहीं, इस भाषा में सोचने के कारण ही बहुत कठिनाई हो गयी है। इस भाषा में सोचने के कारण ही हमने मंदिर बना लिए हैं, मूर्तियां बना ली हैं, पूजा चल रही है, भजन कीर्तन चल रहे हैं जिनका परमात्मा से कोई भी संबंध नहीं है, नहीं हो सकता है। ये हमारे गढ़े हुए परमात्मा हैं जो हमने अपनी कल्पना से गढ़ लिए हैं। परमात्मा का अर्थ है समग्र, दी टोटल, वह जो सारा जगत है, सारा जीवन है उसका जोड़। खंड खंड हम देखते हैं। एक आदमी है, एक पौधा है एक जमीन है एक पहाड़ है एक सागर है। खंड खंड, अलग अलग हैं लेकिन सबका अस्तित्व गहरे में जुड़ा हुआ है और संयुक्त है। दस करोड़ मील दूर है सूरज, लेकिन अभी अगर ठंडा हो जाय तो सुबह फिर कोई पता न चलेगा कि कहां गये हम, साथ ही ठंडे हो जायेंगे। दस करोड़ मील दूर जो है उसकी किरणें हमें जिलाये हुए है, गरम किये हुए है। ऐसा नहीं है कि थर्मामीटर से फिर आप नापेंगे सूरज के ठंडे हो जाने पर तो आपको शरीर ठंडा होता हुआ मालूम पड़ेगा। नहीं, थर्मामीटर भी ठंडा हो चुका होगा। वह भी गर्मी नहीं बतायेगा। आप भी ठंडे हो चुके होंगे और कोई नहीं होगा जो जान सके कि गरम है। तो सारी गर्मी दस करोड़ मील दूर से चली आ रही है। दस करोड़ मील दूर से हम बंधे हैं। एक फूल खिल रहा है पृथ्वी पर। वह सूरज की किरणों से बंधा है। एक बीज अंकुरित हो रहा है, वह सूरज से बंधा है। लेकिन सूरज से ही बंधा है ऐसा नहीं और गहरे से गहरे दूर से दूर तारे से हमारा संबंध है। उससे भी हम बंधे हैं। एक अनंत जाल है अस्तित्व का जिसमें सब जुड़े हुए हैं। फूल की एक माला कोई मेरे गले में डाल जाता है। फूल ही फूल दिखायी पड़ते हैं, भीतर का सूत नहीं दिखायी पड़ता है लेकिन फूल अगर अलग अलग होते तो माला नहीं होती। भीतर कोई सूत है जो पिरोया हुआ है इसलिए माला है।

यह सारा अस्तित्व पिरोया हुआ है, इस सारे अस्तित्व में हम एक दूसरे के भीतर प्रवेश कर गये हैं। हमें ख्याल में नहीं आता। आप हैं, आपने कभी सोचा है कि आपके भीतर करोड़ों करोड़ों साल का अस्तित्व

पिरोया हुआ है । एक छोटा बच्चा माँ के पेट में निर्मित होता है तो चौबीस अणु पिता से आते हैं उसके पास चौबीस अणु उसकी मां से आते हैं । पिता के चौबीस अणु में से उसके पिता के चौदह अणु होते हैं, उसकी मां के बारह अणु होते हैं । पिता के पिता के अणुओं में ६ उसके पिता के पिता के होते हैं, ६ उसकी मां के माँ के होते हैं और यह सारे अणुओं की यात्रा अंतहीन चल रही है । आप आज ही अचानक पैदा नहीं हो गये, हजारों, लाखों साल की शृंखला की एक कड़ी हैं आप । एक लंबी शृंखला की कड़ी है जो जुड़ी हुई है और ऐसा नहीं है कि आप पीछे से ही जुड़े हैं भविष्य में भी जोड़ जारी रहेगा । वहां भी यात्रा जारी रहेगी । आज आपकी बगिया में जो फूल खिला है वह अचानक नहीं खिल गया है । उसके पीछे की यात्रा अनंत है और अब तो वैज्ञानिक सोचते हैं कि किसी न किसी दिन जब पहली दफा कोई भी जमीन पर आया होगा तो वह पैदा कैसे हो गया होगा । जरूर किसी दूसरे ग्रह उपग्रह से उडकर आया होगा या कोई दूसरा ग्रह उपग्रह से किसी यात्री के साथ चला आया होगा । अभी हमारे यात्री चांद पर गये तो लौटकर हमने उनको महीने भर परीक्षा की और जांच पड़ताल की कि चांद से वे कोई कीटाणु तो नहीं ले आये लेकिन चांद पर वे कुछ कीटाणु जरूर छोड़ आये होंगे जिनकी कोई परीक्षा नहीं हुई और हो सकता है चांद से हमारा संबंध टूट जाय, आगे न हो और वे कीटाणु विकसित होते रहें और करोड़ों साल में वहां एक प्राणी पैदा हो जाय । कभी न कभी किसी अंतहीन काल में इस पृथ्वी पर, किसी दूसरे ग्रह से जीवन के कोई पहले चरण इसी भांति आये होंगे । उनसे हमारा जोड़ है । अंतहीन शृंखला है, उससे हम जुड़े हैं । यह शृंखला बहुत दिशाओं में मल्टी डाइमेंशनल, बहु आयाम में फैली हुई है । पीछे, आगे, चारों तरफ, नीचे, ऊपर सब तरफ जितनी दिशाएं है सब दिशाओं में हम जुड़े हुए हैं । उन सब दिशाओं के जोड़ पर हमारा छोटा सा बिन्दु का अस्तित्व है और इस अस्तित्व को हम कहते हैं मैं । मैं कहने का अधिकार सिवाय परमात्मा के और किसी को भी नहीं हो सकता है क्योंकि हम मैं कह भी न पायेंगे और बिखरने का क्षण आ जायेगा । लेकिन सब बिखरता रहे, सब बनता रहे, जिसमें बिखरता है, और जिसमें बनता है वह है, वह है । वह न बिखरता है, न वह बनता है ।

एक सागर है, उसपर लहरें बन रही हैं । अभी एक लहर उठी कितनी शान से, कितनी अकड़ से । आकाश को छूने की हिम्मत से, आकांक्षा से । कितनी जोर से उछलकर उसने सागर के चारों तरफ देखा है और पास पड़ोस की छोटी लहरों से कहा हो, देखती हो, कौन हूं मैं ? लेकिन जब वह कह रही है, देखती हो, कौन हूं मैं, तभी बिखराव शुरू हो चुका है । वापस गिरना शुरू हो गयी है । वह कह भी नहीं पायी है और गिरना शुरू हो गया है । उसका कहना पूरा भी न हो पायेगा दूसरी लहरें शायद सुन भी न पायेंगी और लहर खो जायेगी । सागर में लहरें उठतीं रहती हैं, खोती रहती है । आप ऐसा तो सोच सकते हैं कि सागर हो बिना लहरों के ऐसा भी हो सकता है कि शांत हो, कोई लहर न हो, सागर हो । लेकिन ऐसा आप नहीं सोच सकते हैं कि लहरें हों बिना सागर के । समुद्र की छाती पर लहरें उठती, बनती, बिगडती रहती हैं । अगर हम लहर लहर को देखते रहें तो सागर का हमें कोई पता न चलेगा । हम सब लहर को, जोड़ को देख लेते हैं इसलिये सागर का पता चलता है । परमात्मा का अर्थ है वह जो अस्तित्व की अनंत अनंत लहरें हैं । उनको हम देखने, जोड़ने में समर्थ हो जायें तो परमात्मा का पता चलता है । और अगर समग्र को न देख सके, एक एक टुकड़े को देखते रहे तो हमें आदमियों का पता चल जायगा, पौधों का पता चलेगा, पत्थर का पता चलेगा, पहाड़ों का पता चलेगा लेकिन परमात्मा का पता नहीं चलेगा ।

परमात्मा है सबका जोड़ । अगर सारे जगत के समस्त अस्तित्व को जोड़ा जा सके तो जो हिसाब आयेगा पीछे वह परमात्मा है लेकिन वह पूरी तरह जोड़ा जा नहीं जा सकेगा क्योंकि वह अंतहीन और अनंत है इसलिए हम सिर्फ कंसीव कर सकते हैं, हम केवल भाव

के अनुभव कर सकते हैं उस जोड़ का। लेकिन किसी दिन हम जोड़कर बता नहीं सकते कोई फार्मूला बनाकर कि इतना रहा जोड़। इसके भी कुछ कारण हैं कि हम नहीं बता सकते। इसे थोड़ा सोच लेना उपयोगी होगा। ईश्वर को समझने में आधारभूत होगा। हम कभी नहीं सोच सकते कि कोई चीज असीम हो सकती है। हमारी कल्पना सीमा पर जाकर रुक ही जाती है। हम कितनी ही दूर सीमा को ले जायें फिर भी सीमा हटती है, मिटती नहीं। अगर हम सोचें कि जगत असीम है तो हम इतना कर सकते हैं कि बहुत करोड़ों, अरबों अरबों मीलों दूर कहीं सीमा होगी लेकिन हमारी बुद्धि में सीमा नहीं होगी यह पकड़ मे नहीं आता। हम कहेंगे, और थोड़ा आगे, और थोड़ा आगे। जैसे छोटे बच्चे को कहानी कहो तो वह पूछता है, फिर और, फिर और। वह पूछता चला जाता है। उसकी समझ में यह नहीं आता कि बात एकदम खत्म हो जायेगी। आगे तो होगा न कुछ। और हम भी अगर पूछते हैं तो हम सोच सकते हैं कि और आगे, और आगे। लेकिन हम यह नहीं सोच सकते कि ऐसा भी है यह जगत कि इसकी कोई सीमा ही न होगी। इसे सोचने मे सिर घूम जाता है। इसे कभी सोचना चाहिए, सिर को कभी कभी घुमाना भी चाहिए ताकि सिर की जो अकड़ है वह थोड़ी कम हो जाय। सिर को बहुत अकड़ है, वह सोचता है, सभी हम सोच सकते हैं। वह नहीं सोच सकता। हम असंख्य नहीं सोच सकते हैं। बड़े से बड़ा गणितज्ञ भी सोचेगा तो बड़ी से बड़ी संख्या सोचेगा। वह कहेगा और इतना जोड़ दें और इतना जोड़ दें लेकिन कोई कहता है असंख्य, तो हमको असंख्य का मतलब होता है ऐसा, जो गिना न जा सके। लेकिन हम सोचते हैं अगर मेहनत की जाय तो गिना जा सकता है। अगर कोई आपसे पूछे कि आदमी के सिर पर कितने बाल हैं तो आप कह देंगे कि असंख्य। उसका यह मतलब नहीं है कि असंख्य हैं। बाल तो गिने जा सकते हैं। कुछ बुद्धिमानों ने मेहनत करके गिन भी लिये। कुछ बुद्धिमान ऐसी ही नासमझी के काम भी किया करते हैं। आदमी की खोपड़ी के बाल गिने जा सकते, आकाश के तारे गिने जा सकते लेकिन हम यह नहीं सोचते कि ऐसा भी हो सकता है कि संख्या समाप्त ही न होती हो। कहीं भी समाप्त न होती हो। तब फिर सिर घूम जाता है। सीमा समझ में आती है, असीम समझ में नहीं आता। शुरूआत हुई यह समझ में आता है यह समझ में नहीं आता कि कोई चीज शुरू ही नहीं हुई, शुरू ही नहीं हुई, अंत भी नहीं होगी, अंत भी नहीं होगी। अगर बुद्धि से नापने जायेंगे तो परमात्मा की पकड़ कभी न आ पायेगा क्योंकि बुद्धि न असीम को सोच सकती न पूर्ण को सोच सकती, न अनंत को सोच सकती लेकिन अनंत को सोचने की कोशिश करें, यह भी एक ध्यान का प्रकार है। अनंत को सोचें और सोचते ही चले जायें और सीमाओं को आगे हटाते जायें, हटाते जायें और अंततः मिटा देने की कोशिश करें। कोई भी सीमा नहीं है। सीमा मिटी कि भीतर बुद्धि भी मिट जायेगी। ये दोनों एक साथ मिट जाते हैं। वहां सीमा मिटी, यहां बुद्धि मिटी। वहां प्रभु और अंत मिटा, यहां बुद्धि मिटी। वहां असंख्य मिटी, यहां बुद्धि मिटी और जिस क्षण बुद्धि मिट जाती है उस दिन असीम, अनंत, समग्र का बोध शुरू हो जाता है। वह बोध परमात्मा का बोध है। परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं, समग्र जोड़ का नाम है लेकिन वह जोड़ भी हमारी बुद्धि का कोई गणित नहीं है, हमारी बुद्धि की असफलता है और अंत में इतनी ही बात ठीक से समझा दूं कि बुद्धि की असफलता जहां से हो वहीं से धर्म का प्रारंभ है। बुद्धि जहां पूरी तरह असफल हो जाती है। ध्यान रहे, अगर थोड़ी भी बची रही तो उसने कहा, ठहरो, अभी हम और थोडी कोशिश करें। टोटल फेल्योर, जहां पूर्ण असफलता आ गयी।

एक मित्र से मैं बात रहा था परसों ही रात और मैंने उनसे कहा कि जब पूर्ण असफलता हो जाती है मनुष्य को सोचने से, जब सोचना समाप्त हो जाता है और तब जानना शुरू होता है। जहां थिंकिंग समाप्त होती है वहां नोइंग शुरू होती है। जहां विचार बंद होते हैं वहां जानना शुरू होता है। तो उनसे मैं कह रहा था कि जहां बुद्धि पूरी असफल हो जाती है। उन्होंने कहा

तब तो मन में बड़ा विषाद मालूम पड़ता होगा। मैंने कहा, अगर विषाद मालूम पड़ता हो तो अब भी पूरी तरह असफलता नहीं हुई क्योंकि अभी सफलता की कोई आशा मन में शेष है उसी की वजह से विषाद मालूम होता है। पूर्ण असफलता का अर्थ है कि अब सफलता की कोई आशा भी न रही। आशा भी नहीं, निराशा भी नहीं, असफलता पूरी हो गयी और यह पता चल गया कि यह हो ही नहीं सकता था, यह हो ही नहीं सकता है। बुद्धि से असीम को जाना नहीं जा सकता। फिर जैसे ही यह पता चल जाय, बुद्धि ठहर कर खड़ी हो जाती है। कितनी बार हम कहते हैं कि बुद्धि बड़ी चंचल है। बुद्धि चंचल रहेगी। आप ऐसी छोटी छोटी चीजों पर लगाते हैं। जरा असीम पर लगाकर देखें और आप पायेंगे कि बुद्धि ठहर गयी, फिर वहां चंचलता नहीं रहेगी। बुद्धि को आप लगाते हैं इतनी क्षुद्र चीजों पर कि वह चंचल हो ही जायगी, ऊब जायगी, दूसरे पर जायेगी, तीसरे पर जायेगी। असीम पर लगा दें बुद्धि को और आप अचानक पायेंगे कि वह असफल हो गयी, जाने को कहीं नहीं रहा, नो व्हेयर टु गो, असीम है, जाऊं कहां, कोई सीमा न रही, कोई अंत नहीं और जहां असीम पर बुद्धि को लगाया जाता है वहीं बुद्धि टूटकर बिखर जाती है एक्स्प्लोजन की तरह, एक विस्फोट की तरह बुद्धि बिखर जाती है। फिर जो शेष रह जाता है वह परमात्मा है। ऐसा नहीं है कि वह परमात्मा आपके सामने होगा, ऐसा कि आप भी उसमें होंगे। ऐसा नहीं आप इधर खड़े होंगे उधर परमात्मा होगा। नहीं, जहां आपकी बुद्धि बिखर गयी तब जो शेष रह जायगा आपमें, आपके बाहर, आपसे दूर, आपके पास, भीतर, बाहर, यहां वहां, सब कहीं जो शेष रह जायगा वह परमात्मा है। परमात्मा का दर्शन नहीं हो सकता। ऐसा नहीं कि आप उसका दर्शन कर लेंगे और नमस्कार कर लेंगे। हां रामचन्द्र जी मिल सकते हैं, क्राइस्ट मिल सकते हैं, कृष्ण जी मिल सकते है, बुद्ध, महावीर मिल सकते है, परमात्मा नहीं मिल सकता। क्योंकि इनको आप अपनी ही कल्पना से पैदा कर सकते हैं, लेकिन परमात्मा आपकी कल्पना से पैदा नहीं हो सकता। जहां कल्पना हार से थक जाती है, विश्राम करने लगती है वहां उसका अनुभव शुरू होता है। और मैं कह रहा हूं कि इस परमात्मा की उपस्थिति अगर मौजूद रहे तो ही वास्तविक क्रांति हो सकती है क्योंकि तब हम अस्तित्व की जड़ों तक उतर जाते हैं और जड़ों से रूपांतरण होता है। प्रभु में जीने के अतिरिक्त और कोई क्रांति नहीं है, प्रभु से संबंधित होने के अतिरिक्त और कोई न्यूटेशन रूपांतरण नहीं है। प्रभु से संबंधित होने के अतिरिक्त न कोई क्रांति है, न कोई परिवर्तन, न कोई रूपांतरण, न कोई अनुभव, न कोई आनंद, न कोई आलोक, न सत्य, न कोई मुक्ति। इसलिए प्रभु पर जोर दे रहा हूं। इधर मेरे पास मित्र हैं, वह कहते हैं कि प्रभु को बीच में लाने की कोई भी जरूरत नहीं। अगर चल सकता बिना लाये तो ठीक था लेकिन वह मौजूद है ही। उसे हटा सकते तो भी ठीक था लेकिन वह हटता नहीं वह मौजूद है ही हां जो देख नहीं रहे उन्हें पता नहीं चलता है। जैसे अंधो की एक बस्ती हो और वे कहें कि प्रकाश को बीच में लाये बिना बात नहीं बनेगी और आंख वाला कहे कि मैं बीच में लाता नहीं, वह बीच में है ही। तुम्हें दिखायी नहीं पड़ता यह दूसरी बात है और तुम अंधे हो, फिर भी चलते प्रकाश में ही हो। अंधे कहें कि प्रकाश की बात ही बीच से हटा दो तो भी वह आंख वाला कहेगा, बात हटाने से कुछ फर्क नहीं पड़ेगा, प्रकाश बीच में है ही और अच्छा है कि हम उसे जान ही लें। क्योंकि वह हमें टकराने से बचा सकेगा। हम उसे पहचान ही लें क्योंकि वह हमारे रास्ते पर साथी बन जायगा, हम उसे देख ही लें क्योंकि उसे देख लेने के बाद ही चल पायेंगे और ठीक से पहुंच पायेंगे। अंधे को प्रकाश नहीं दीखता, हमें परमात्मा नहीं दीखता। निश्चित ही किसी अर्थ में हम अंधे हैं। उस अंधेपन को तोड़ने का उपाय ही ध्यान है।

●●●

पत्र प्रेरणा

(आचार्य श्री द्वारा श्री रमाकांत उपाध्याय, काठमांडू नेपाल को लिखा गया एक पत्र)

मेरे प्रिय,

प्रेम।

सहारे मात्र बाधायें हैं।

सब सहारे छोड़ें—क्योंकि तभी उसका सहारा मिल सकता है।

वह तो केवल बेसहारों का सहारा है :

और उसके अतिरिक्त गुरू और कोई भी नहीं है :

शेष सब गुरू उसके मार्ग में अवरोध हैं।

गुरू को पाना हो तो गुरूओं से बचें।

और शून्य होने से न डरें।

क्योंकि वही द्वार है।

वही मार्ग है।

वही मंजिल है।

शून्य होने का साहस ही पूर्ण होने की क्षमता है।

जो भरे हैं, वे खाली रह जाते हैं।

और जो खाली हैं, वे भर जाते हैं।

ऐसा ही उसका गणित है।

और कुछ करने की न सोचें।

करने से वह नहीं मिलता है।

न जप से न तप से।

क्योंकि वह तो मिला ही हुआ है!

रुकें और देखें।

करना ही दौड़ना है।

न करना ही रुकना है।

आह! काश! वह दूर होता तो दौड़कर मिल जाता!

लेकिन, वह तो निकट से भी निकट है!

काश! उसे खोया होता तो खोज भी लेते!

लेकिन, उसे खोया ही कब है?

रजनीश के प्रणाम

१३/५/१९७०

(सुश्री कुसुम बहन, लुधियाना को लिखा गया एक पत्र)

प्यारी कुसुम,
प्रेम । एक ऐसा संगीत भी है, जहाँ कि स्वर नहीं हैं ।
प्राण उस स्वर – शून्य संगीत के लिए ही आतुर है ।
एक ऐसा प्रेम भी है, जहाँ कि शरीर नहीं है ।
प्राण उस शरीर मुक्त प्रेम के लिए ही आतुर हैं ।
एक ऐसा सत्य भी हैं जहाँ कि आकार नहीं है ।
प्राण उस निराकार सत्य के लिए ही आतुर हैं ।
इसीलिए, स्वरों से तृप्ति नहीं होती है ।
इसीलिए, शरीरों से संतोष नहीं होता है ।
इसीलिए, आकार से आत्मा नहीं भरती है ।
लेकिन, इस अतृप्ति, इस असंतोष को ठीक से पहचानना आवश्यक है ।
क्योंकि, वह पहचान ही अंततः अतिक्रमण (Transcendence) बनती है ।
फिर स्वर ही स्वर शून्यता का द्वार बन जाता है ।
और शरीर ही अशरीरी का मार्ग बन जाता है ।
और आकार ही निराकार हो जाता है ।

रजनीश के प्रणाम
१३/५/७०

●●

(इन्दौर के उत्साही युवक दिनेश शाही ने आचार्य श्री को लिखा कि वे युवक क्रांति दल, का निर्माण करना चाहते हैं । उन्होंने आचार्य श्री से यु० क्रां० दल का विचार आदि जानना चाहा । प्रत्युत्तर में आचार्य श्री ने लिखा –)

मेरे प्रिय,
प्रेम । मैं प्रवास में था । लौटा हूं तो तुम्हारा पत्र मिला है । जीवन जागृति केन्द्र के मित्रों से मिलकर युवक क्रांति दल का कार्य शुरू कर सकते हो । उसका कोई विधान नहीं है । क्रांति का विधान हो भी नहीं सकता है । युवकों में विचार की जागृति हो और अंधविश्वासों की जगह वैज्ञानिक चिन्तना जगह ले । इतनी ही भर अपेक्षा है । इस बार जब मैं इन्दौर आऊं तो जरूर मिलना । शेष शुभ । वहां सबको प्रणाम ।

रजनीश के प्रणाम
२२/११/१९६९

●●●

एक शुभ समाचार :

आचार्य श्री की ज्योतिर्मय वाणी का मासिक बुलेटिन

सिंहनाद

(गुजराती भाषा में)

मूल्य : वार्षिक २ रु०
एक प्रति २० न. पै.

(शीघ्र सदस्यता ग्रहण करके पावन आयोजन में योगदान कीजिए)

प्रकाशक : श्री नटु भाई ए० मेहता,
युक्तांद एवं जीवन जागृति केन्द्र परिवार,
२१, संस्कार सोसाइटी, टैगोर रोड,
सुरेन्द्र नगर।

जीवन संगीत से आलोकित : नई साज सज्जा में

ज्योति शिखा

(आचार्य श्री के विचारों की आध्यात्मिक त्रैमासिकी)

संपादक : श्री मल्लिपाल

मूल्य : वार्षिक : ५ रु०
एक प्रति : १)२५ न० पै०

प्रकाशक : जीवन जागृति केन्द्र,
रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग,
डा० डी० एन रोड, बंबई : १

आचार्य श्री का प्रकाशित साहित्य

		हिन्दी	गुजराती	मराठी
१.	साधना पथ	३।००	३।००	३।००
२.	क्रांति बीज	३।००	२।५०	२।५०
३.	सिंहनाद	१।५०	१।२५	३।००
४.	मिट्टी के दिए	३।००	३।५०	—
५.	पथ के प्रदीप	३।००	३।००	८।००
६.	संभोग से समाधि की ओर	३।५०	३।५०	—
७.	आचार्य रजनीश समन्वय, विश्लेषण, संसिद्धि	७।५०	—	—
८.	मैं कौन हूं ?	२।००	२।००	—
९.	नए संकेत	२।००	१।७५	—
१०.	अज्ञात की ओर	२।००	२।००	—
११.	सत्य की खोज	३।००	—	—
१२.	अंतर्यात्रा	३।५०	—	—
१३.	शांति की खोज	२।००	—	—
१४.	सत्य के अज्ञात सागर का आमंत्रण	१।२५	१।५०	—
१५.	सूर्य की ओर उड़ान	१।००	१।००	—
१६.	प्रेम के पंख	०।७५	०।७५	०।७५
१७	कुछ ज्योतिर्मय क्षण	१।००	०।७५	—
१८.	अमृत कण	०।६०	०।५०	०।५०
१९.	अहिंसा दर्शन	०।५०	०।५०	०।५०
२०.	नई दिशा, नई बात	०।३०	—	—
२१.	न आंखों ने देखा न कानों ने सुना	०।१५	—	—
२२.	क्रांति के बीच सबसे बड़ी दीवार	०।३०	—	—
२३.	बिखरे फूल	०।३५	—	—
२४.	जीवन और मृत्यु	—	१।००	—
२५.	नए मनुष्य के जन्म की दिशा	०।७५	०।७५	—
२६.	अस्वीकृति में उठा हाथ (भारत, गांधी और मेरी चिंता)	५।००	—	—

प्राप्ति स्थल :

[१] जीवन जागृति केन्द्र, रूम नं. ५३, एम्पायर बिल्डिंग, डा० डी. एन. रोड, बंबई : १

[२] मोतीलाल बनारसी दास, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–७।

[३] स्वदेशी वस्तु भंडार, जामनगर।

[४] आर. अंबानी एंड कं०, अपोजिट : जिमखाना, राजकोट।

[५] चंद्रकांत पटैल, आमोपालव, बैंक आफ इंडिया के सामने, रावपुरा, बड़ौदा।

[६] मोतीलाल बनारसी दास, नेपाली खपरा वाराणसी।

[७] मोतीलाल बनारसीदास, अशोक राजपथ, पटना।

[८] भारतीय संस्कृति भवन, माई हीरागेट, जलंधर शहर।

[९] नरसिंह भाई पटैल, सहकारी मुद्रणालय, कोठारी मार्ग, सुरेंद्र नगर।

[१०] सस्तु किताब घर, पथ्थर कुवां, रिलीफ रोड, अहमदाबाद।

[११] बालगोविंद कुबेरदास, गांधी रोड, अहमदाबाद।

[१२] सर्वोदय साहित्य भंडार, महात्मा गांधी मार्ग, इन्दौर—२

[१३] हीराभाई मेहता, पांचघर, ७०, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता : १

[१४] सुषमा साहित्य मंदिर, जवाहरगंज, जबलपुर।

[१५] युनिव्हर्सल बुक सर्विस, सिटी कालेज के सामने, जबलपुर।

[१६] श्री आर. के. पुंगालिया, १०१, टिम्बर मार्केट, पूना–२

[१७] श्री महेन्द्र कुमार मानव, विन्ध्याचल प्रकाशन, छतरपुर (म० प्र०)

[१८] श्री सौभाग्यचंद्र तुरखिया, २ प्रभात सोसाइटी, सुरेन्द्र नगर।

वर्षों से हम

अपनी श्रेष्ठतम सेवायें

प्रस्तुत कर रहे हैं

धुम्रपान के अनोखे आनंद के लिये

नंबर

22

छाप बिड़ी

पीजीये.

निर्माता वृजलाल मणीलाल एन्ड कं. गोंदिया.

SYNTROFIX PIGMENT EMULSION PASTES

FOR

UNSURPASSED BRILLIANCY OF YOUR PRINTS

Available in variety of Shades :

SYNTROFIX BRILLIANT LEMON—YELLOW

GOLDEN—YELLOW

ORANGE

GREEN

BLUE

RED

BROWN

BLACK

Manufacturers :

SYNDET PRIVATE LIMITED

OFFICE : Prajapati Building, Khadia Char Rasta, AHMEDABAD No. 1
Tele. : 23682

FACTORY ; Dudheshwar Road, Opp. Rustom Mills, AHMEDABAD No. 1
Tele :25732

उत्तम तम्बाखू और कुशल कारीगरों से बनी

शेर और पहलवान छाप बिड़ी

भारत में अग्रणी है

मोहनलाल हरगोविंददास

जबलपुर म० प्र०

मानसेवी संपादक : अरविन्द कुमार । सह-संपादक : आलोक कुमार पाण्डे । व्यवस्थापक : श्री आर. आर. मिश्रा

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्द कुमार, कमला नेहरू नगर, जबलपुर ।

मुद्रण : जबलपुर को-आपरेटिव प्रिंटिंग प्रेस, गोलबाजार, जबलपुर से मानसेवी संपादक अरविन्द कुमार के लिये मुद्रित

वर्ष : १ ।। अंक : २२ ।। १६ मई १९७० ।। मूल्य : एक प्रति : ०.६० न० पै०

।। वार्षिक : १२ रु० ।।

आचार्य रजनीश दर्शन पर साहित्य

१. आचार्य रजनीश : समन्वय, विश्लेषण, संसिद्धि	: डा० रामचंद्र प्रसाद,	मूल्य : ७/५०
२. जीवन क्रांति की दिशा	: डा० सेठ गोविंद दास,	मूल्य : २/००
३. शांति की खोज	: श्रीमती उर्मिला, एम. ए. मू.	: २/००
४. कुछ ज्योतिर्मय क्षण	: क्रांति देवी	मूल्य : १/००
५. RAJNEESH : A GLIMPSE	: V. VORA	Rs. : 1/25